चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

ये जॉर्ज को मिटाने की साज़िश है!

पेज 3

चटकलिया मज़दूरों पर लटका जूट का फंदा

पेज 5

साई पूर्ण ब्रह्म हैं

पेज 12

क्या कुंभ और विवाद सगे रिश्तेदार हैं?

पेज 13

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 15 फरवरी–21 फरवरी 2010

मुलायम-अमर अलग क्यों हुए

फोटो–प्रभात पाण्डेय

संतोष भारतीय

मुलायम सिंह और अमर सिंह के अलगाव की कहानी में कई तत्व हैं. अविश्वास है, ग़लतफहमी है, जलन है, आकांक्षा है, महत्वाकांक्षा है, षड्यंत्र हैं, दु:ख है, दर्द है और बेबसी है. मुलायम सिंह और अमर सिंह के अलावा इस कहानी के मुख्य पात्र हैं मोहन सिंह, आज़म खान और राम गोपाल यादव. बाद में तो जैसे पूरी समाजवादी पार्टी ही इस कहानी के प्रमुख किरदार में बदल गई. अमर सिंह चौदह साल तक मुलायम सिंह के हमसफर रहे, पर इन चौदह सालों में पिछले पांच साल ऐसे रहे जिसमें दिखे तो वह हमसफर, पर देखता उन्हें हर कोई शक़ की नज़र से था. किसी को नहीं पता कि पहला पत्थर किसने चलाया, पर आज दोनों तरफ़ से पत्थरों की बारिश हो रही है. दोस्ती के आत्मीय संबंध जब टूटते हैं, तो वे कितने वीभत्स होते हैं, इसे हम जीता-जागता देख रहे हैं.

मुलायम सिंह मुख्यमंत्री थे तो अमर सिंह उनके मुख्य कर्ताधर्ता. उद्योग विकास परिषद बना, उन्होंने देश के बड़े पैसे वालों को मुलायम सिंह से जोड़ा और आशा जगाई कि उत्तर प्रदेश में बड़ा निवेश होगा. किसानों के सवाल पर मुलायम सिंह का वी पी सिंह से मतभेद हो गया. वी पी सिंह ने मुलायम सिंह के ख़िलाफ़ सघन अभियान छेड़ दिया तथा किसान और उसकी ज़मीन को मुख्य मुद्दा बनाया. चुनाव आया और मायावती जीत गईं. मायावती मुख्यमंत्री बनीं.

विधानसभा की हार के बाद समाजवादी पार्टी की समीक्षा बैठक हुई. पार्टी के नेता इस हार के पीछे अमर सिंह को मान रहे थे तथा आम कार्यकर्ता मान रहा था कि अगर मुलायम सिंह ने वी पी सिंह की मांगें मान ली होतीं तो किसानों और आम लोगों के बीच उनका विरोध न होता और वह मुख्यमंत्री बने रहते. उन्हें लग रहा था कि अमर सिंह की सलाह पर मुलायम सिंह ने सख्त और किसान विरोधी रुख़ अपनाया था.

इस बैठक में पहली बार मोहन सिंह ने समीक्षा भाषण देते हुए कहा कि पार्टी को नचनियों की पार्टी बना दिया गया है, जिसकी वजह से हार हुई है. माहौल ग़मगीन और गुस्से से भरा था, जिसे शब्द मोहन सिंह ने दिए. अमर सिंह के ऊपर यह शायद पहली बार कठोर शब्दों की बौछार थी, जिससे वह तिलमिला गए थे. अमर सिंह को लगा कि उनका जानबूझ कर अपमान किया जा रहा है.

मोहन सिंह के भाषण के पीछे मुलायम सिंह का कोई हाथ नहीं था. पिछले सात सालों में समाजवादी पार्टी के सभी नेताओं को लग रहा था कि मुलायम सिंह उनकी बात नहीं सुनते. पहले राजबब्बर, फिर बेनी प्रसाद वर्मा और बाद में आज़म ख़ान, सभी को लगा कि उनकी राय की कोई क़ीमत मुलायम सिंह के सामने नहीं है. आम कार्यकर्ता कहें या पार्टी के नेता, सभी को लगता था कि मुलायम सिंह फ़ैसले लेते हैं, पर उनकी राय से नहीं. यहां तक कि फ़ैसला लेने से पहले राय-मशविरा भी नहीं करते. विधानसभा में हार का अकेला ज़िम्मेवार समाजवादी पार्टी के भीतर अमर सिंह को माना जाने लगा.

पहले समाजवादी पार्टी में बहसें होती थीं, शिविर होते थे, यहां तक कि पार्टी के ख़र्चे के लिए ज़िलों से चंदे होते थे. उस समय चुनावों में बड़ी राशि उम्मीदवारों को नहीं मिल पाती थी. अमर सिंह के आने के बाद समाजवादी पार्टी के लिए कई रास्ते खुले. पहला रास्ता खुला कि राष्ट्रीय स्तर के दूसरे सहयोगियों के साथ बात करने वाला एक विश्वस्त सहयोगी मुलायम सिंह को मिल गया. दूसरे दलों से बातचीत, तालमेल, रणनीति और सहयोग का ज़िम्मा पहले मुलायम सिंह स्वयं संभालते थे. उन्हें एक ऐसे साथी की सख्त ज़रूरत थी, जो उनके राजनैतिक हितों की देखभाल कर सके. अमर सिंह ने इस रिक्त स्थान की पूर्ति कर दी. उन्होंने कुशलता से मुलायम सिंह को राष्ट्रीय क्षितिज पर स्थापित कर दिया.

इतना ही नहीं, उन्होंने समाजवादी पार्टी के साथ देश के बड़े पूंजीपतियों को जोड़ा तो दूसरी तरफ़ फ़िल्म से भी लोगों को लाए. समाजवादी पार्टी के पास साधनों की कमी समाप्त हो गई और जिस पार्टी में पहले मुलायम सिंह अकेले भीड़ खींचने वाले नेता थे, बाद में यह काम राजबब्बर ने किया. अब इसमें जयाप्रदा, जया बच्चन और संजय दत्त भी शामिल हो गए. समाजवादी पार्टी से जुड़े पुराने समाजवादियों को लगा कि मुलायम सिंह तो उनसे दूर हो ही गए, पार्टी भी समाजवाद से दूर चली गई. लेकिन वह दौर जीत का था, इसलिए बोल कोई नहीं रहा था. अमर सिंह के पास ख़बरें आ रही थीं कि समाजवादी पार्टी के नेताओं के बीच उनकी आलोचना हो रही है और यह उन्हें बुरा लगता था. उनका मानना था कि जब साधन का सवाल हो तो उनसे अपेक्षा की जाए, जब भीड़ खींचने के लिए ज़रूरत हो तो जयाप्रदा या जया बच्चन को बुलाया जाए और बाद में कमरों में उन्हें कोसा भी जाए.

उत्तर प्रदेश विधानसभा की हार और लोकसभा चुनाव के बीच अमर सिंह की क़िस्मत का समाजवादी पन्ना बंद करने का निर्णय हो चुका था. मुलायम सिंह के परिवार के रुख ने पार्टी के सभी नेताओं को इशारा दे दिया कि अब अमर सिंह से डरने की ज़रूरत नहीं है. अमर सिंह केवल पैसा लाने की मशीन हैं, वोट नहीं दिलवा सकते.

मुलायम सिंह के परिवार के सभी प्रमुख पुरुष पार्टी के प्रमुख पदों पर हैं और विधानसभा या लोकसभा में भी हैं. इन सबकी शुरू में अमर सिंह से काफ़ी नज़दीकी रही. लेकिन राजनीति बड़ी हरजाई है. एक छोटे वर्ग ने मुलायम सिंह के परिवार के लोगों से कहना शुरू किया कि अमर सिंह ने मुलायम सिंह का बहाना लेकर बहुत पैसा इकट्ठा किया है. इतना ही नहीं, परिवार से यह भी कहा कि मुलायम सिंह के रक्षा मंत्री रहते हुए सुखोई सहित जितने बड़े सौदे हुए, उनमें अमर सिंह ने जो पार्टी के नाम पर लिया, वह उनके पास आना चाहिए.

पैसा एक ऐसी चीज़ है, जो बड़ों-बड़ों के बीच नफ़रत पैदा कर देता है. यही लोग अमर सिंह के पास जाकर कहते कि मुलायम सिंह का पूरा परिवार आप पर पैसा जमा करने की बात कह रहा है. अमर सिंह बोलने में मुंहफट और असावधान क़िस्म के इंसान हैं. उनकी प्रतिक्रिया तीखी होती थी, जिसे और तीखी बनाकर परिवार के लोगों के बीच ये लोग पहुंचाते थे. नतीज़े में अमर सिंह और राम गोपाल यादव जो कभी साथ-साथ घूमते थे, धीरे-धीरे उनमें फोन पर भी बातचीत बंद हो गई.

अमर सिंह ने अपनी नाराज़गी मुलायम सिंह से नहीं छुपाई तथा उन्हें कहा कि उनके ख़िलाफ़ क्या रामगोपाल यादव ने कहा है और क्या अखिलेश यादव ने कहा है. मुलायम सिंह यादव ने कई बार रामगोपाल यादव और अखिलेश यादव से माफी मंगवाई. जबकि दोनों ने कहा कि उन्होंने अमर सिंह के ख़िलाफ़ वे बातें नहीं कहीं, जिन्हें अमर सिंह कहा बताते हैं. इसके बावज़ूद मुलायम सिंह ने न केवल इन दोनों पर, बल्कि पार्टी के दूसरे नेताओं पर भी दबाव डाल कर अमर सिंह से खेद प्रकट करने या माफी मांगने के लिए कहा.

आग लगाने वाले लोगों ने मुलायम सिंह के परिवार को सफलतापूर्वक समझा दिया कि नोएडा की ज़मीन अमर सिंह ने बिल्डरों और पैसे वालों को दिलवा दी है. नोएडा दिल्ली से जुड़ा उत्तर प्रदेश का औद्योगिक क्षेत्र है, जहां ज़मीन मिलना सोना मिलने जैसा है. नोएडा एक प्रमुख कारण है, जिसने मुलायम सिंह के परिवार को अमर सिंह से न केवल दूर कर दिया, बल्कि उनका विरोधी बना दिया. मुलायम सिंह ने बीस दिन पहले अपने कई साथियों से कहा भी कि उन्हें पता ही नहीं चला कि कब अमर सिंह ने पूरा का पूरा नोएडा बेच दिया.

उत्तर प्रदेश विधानसभा की हार और लोकसभा चुनाव के बीच अमर सिंह की क़िस्मत का समाजवादी पन्ना बंद करने का निर्णय हो चुका था. मुलायम सिंह के परिवार के रुख ने पार्टी के सभी नेताओं को इशारा दे दिया कि अब अमर सिंह से डरने की ज़रूरत नहीं है. अमर सिंह केवल पैसा लाने की मशीन हैं, वोट नहीं दिलवा सकते. उन पर पार्टी के नेता छींटाकशी करने लगे कि कहीं सिनेमा के लोगों से वोट मिलता है? समाजवादी पार्टी बिना संघर्ष के जीत नहीं सकती और अमर सिंह ने संघर्ष को सालाना आयोजन में बदल दिया है.

लेकिन मुलायम सिंह ने अमर सिंह का हमेशा बचाव किया और उन्हें सांत्वना दी कि वह उनके साथ हैं और पार्टी में सब ठीक हो जाएगा. अमर सिंह विश्वास और अविश्वास के बीच झूलते रहे. उन्हें वे लोग, जो मुलायम सिंह के परिवार के पास से बैठ कर आते थे, समझाने में सफल हो गए कि मुलायम सिंह परिवार का दबाव नहीं झेल पाएंगे.

आज़म ख़ान और मोहन सिंह ने अमर सिंह को लेकर सवाल उठाने शुरू किए. अमर सिंह के क्रियाकलापों, उनके संबंधों को लेकर अफ़वाहें जैसे बहने लगीं. जयाप्रदा बुरी तरह निशाने पर आ गईं. भारतीय राजनीति में अगर कोई महिला आगे बढ़ती है तो बड़ी संख्या में लोग मानने लगते हैं कि उसका रास्ता किसी बेडरूम से निकल कर आसान हुआ है. भारतीय राजनीतिक मानसिकता का यह दुखद, घिनौना और विद्रूप सच है, जो महिलाओं को राजनीति में आने से हमेशा रोकता है. महिला और उसकी चारित्रिक बदनामी साथ-साथ चलती है. जयाप्रदा को लेकर उड़ाई अफ़वाहों को अमर सिंह सहन नहीं कर पाए. जयाप्रदा का नाम पार्टी नेताओं ने अपने साथ वैसे ही चटखारे लेकर जोड़ना शुरू

(शेष पृष्ठ 2 पर)

एक सलाह अमर सिंह को और एक सलाह मुलायम सिंह के साथियों को देना चाहते हैं. राजनीति में साथ छूटने का मतलब मानवीय रिश्तों का ख़ात्मा नहीं होता.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

बाहरी करेंगे बाबुओं का मूल्यांकन

प्रशासनिक अधिकारियों की कार्यक्षमता के आंतरिक मूल्यांकन की जगह यह काम किसी तीसरे पक्ष से करवाने की कैबिनेट सचिव के एम चंद्रशेखर की योजना ने असर दिखाना शुरू कर दिया है. चार अवकाश प्राप्त नौकरशाहों की टीम जिसमें पी शंकर, एस एन मेनन, कुमुद बंसल और एस सी मेहता शामिल हैं, ने हाल ही में मूल्यांकन का काम किया है. इन बाहरी (तीसरा पक्ष) लोगों ने 130 बाबुओं की लिस्ट में से 80 बाबुओं को संयुक्त सचिव पद के लिए चिन्हित किया है.

लेकिन सूत्रों का कहना है कि इस चयन प्रक्रिया ने ज़्यादातर बाबुओं को प्रमोशन प्रक्रिया से बाहर कर दिया है, जिससे इनका रैंक नीचे की ओर खिसकेगा. फिर भी जिन अवकाश प्राप्त बाबुओं की टीम ने मूल्यांकन का काम किया है, उन सभी का सेवाकाल नि:संदेह ग़ैर-विवादित और त्रुटिरहित रहा है. साथ ही उक्त लोग अपनी नौकरी के दौरान भी व्यवस्था में पारदर्शिता लाने की मांग करते रहे हैं. इन लोगों ने मूल्यांकन प्रक्रिया के लिए संबंधित फील्ड में बाबुओं के अनुभव और दक्षता को महत्व दिया, न कि एसीआर को. मूल्यांकन की पुरानी व्यवस्था में माना जाता था कि अपने वरिष्ठों को प्रभावित करके अधिकारीगण ज़्यादा ग्रेड पा लेते थे. लेकिन, इस नई व्यवस्था को पारदर्शी माना जा रहा है, भले ही कुछ ऐसे असंतुष्ट बाबू इससे सहमत न हों, जो इस मूल्यांकन प्रक्रिया की वजह से पीछे रह गए हों. आशा है कि चंद्रशेखर व्यवस्था में सुधार के लिए ऐसी सार्थक पहल की शुरुआत करेंगे.

बढ़ेगी बाबुओं की संख्या

यूपीए सरकार के दो समझदार मंत्री इन दिनों नए उम्र के एक्सपर्ट बाबुओं की तलाश में हैं. मानव संसाधन विकास मंत्री कपिल सिब्बल ने पूर्व शिक्षा सचिव अनिल बडोदिया की अध्यक्षता में एक एक्सपर्ट ग्रुप बनाया है, जो आईएएस, आईपीएस की तर्ज पर भारतीय शिक्षा सेवा की स्थापना करने पर विचार करेगा. इस बीच केंद्रीय क़ानून मंत्री भी 2011 से राष्ट्रीय न्यायिक सेवा की शुरुआत करने की योजना पर काम कर रहे हैं. हालांकि इन दोनों योजनाओं के बारे में मिश्रित प्रतिक्रियाएं आ रही हैं. कुछ का मानना है कि सरकार को बाबुओं की संख्या बढ़ाने की बजाय घटाने के बारे में सोचना चाहिए. प्रशिक्षित एवं पढ़े-लिखे प्रशासक और न्यायिक सेवा से जुड़े लोग आज देश की ज़रूरत हैं.

मुलायम-अमर अलग क्यों हुए

पृष्ठ एक का शेष

कर दिया, जैसे फ़िल्म में नायक या निर्देशक करते हैं. अफ़वाहों में कोई नहीं छूटा. न मुलायम सिंह, न रामगोपाल यादव, न अखिलेश यादव और न ही अमर सिंह.

लोकसभा चुनाव से पहले समाजवादी पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक हुई. इस बैठक में अमर सिंह आए और उन्होंने लगभग एक घंटे से ज़्यादा लंबा भाषण दिया. इस भाषण में उन्होंने सख्त से सख्त भाषा का इस्तेमाल किया और पार्टी के लोगों से कहा कि सभी उनसे पैसा लेते हैं, मुसीबत में हर तरह की मदद मांगते हैं और उन्हें गाली भी देते हैं. अमर सिंह ने कहा कि उन्होंने चुनावों के लिए हमेशा ढाई सौ करोड़ इकट्ठा किया, पार्टी के लोग दस प्रतिशत भी इकट्ठा कर दिखा दें. उन्होंने गुस्से से कहा कि जयाप्रदा को रंडी कहते हैं और चुनाव में प्रचार के लिए बुलाने के लिए हाथ-पैर जोड़ते हैं. उन्होंने साफ़ किया कि वह वही करते हैं, जो मुलायम सिंह कहते हैं. अमर सिंह ने हर वाक्य में समाजवादी शब्द को ताने की तरह इस्तेमाल किया तथा कहा कि पार्टी के लिए सब कुछ करने वाले लोग समाजवादी नहीं और जो कुछ न कर सिर्फ़ बात करते हैं, वे समाजवादी हैं. इस कार्यकारिणी में अमर सिंह के गुस्से, उनकी भाषा ने संकेत दे दिया कि दूरी बहुत बढ़ चुकी है. अमर सिंह ने यह भी कहा कि पैसा लेना हो तो अनिल अंबानी ठीक और पब्लिक में भाषण देना हो तो अनिल अंबानी को गालियां. अमर सिंह ने अपनी इस तक़लीफ़ को छुपाया नहीं कि लोग उन्हें अनिल अंबानी का राजनैतिक व्यापारिक प्रतिनिधि बताते हैं. उन्होंने मुलायम सिंह पर भी आरोपों की छोटी बौछार की तथा अंत में अपने इस्तीफ़े का ऐलान कर दिया. इससे पहले उन्होंने कहा कि वह अगर सारी बातें बता देंगे तो बहुत से लोग बेनक़ाब हो जाएंगे.

मुलायम सिंह ने अमर सिंह के भाषण के बाद सधी भाषा में कहा कि आपने अपनी सारी बातें पार्टी के सामने रख दीं. वे बातें भी, जो नहीं रखनी चाहिए थीं. अब पार्टी इस पर अपना रुख़ बताए. मुलायम सिंह के नज़दीकी चार-पांच लोगों ने कहा कि अमर सिंह के इस्तीफ़े का सवाल ही नहीं है, क्योंकि कार्यकारिणी में सभी को अपनी बातें रखने का हक़ है. पार्टी के नेताओं को संकेत चला गया कि मुलायम सिंह नहीं चाहते कि अमर सिंह के ख़िलाफ़ और कुछ हो. सभी ख़ामोश हो गए. मुलायम सिंह ने कहा कि पार्टी में लोकतंत्र है और पार्टी की बात माननी चाहिए. इस्तीफ़े का कोई सवाल ही नहीं है.

दरअसल यही कार्यकारिणी की बैठक थी, जिसने अमर सिंह को अहसास दिला दिया कि उनमें और पार्टी में दूरी बढ़ गई है. मुलायम सिंह को अहसास दिलाया कि अमर सिंह सार्वजनिक रूप से कुछ भी कह सकते हैं तथा पार्टी के नेताओं को अहसास कराया कि वे चाहें तो मुलायम सिंह को अमर सिंह से अलग कर सकते हैं. अमर सिंह किडनी का इलाज कराने सिंगापुर गए. समाजवादी पार्टी में रणनीति पर बात शुरू हो गई कि कैसे मायावती को सत्ता से हटाने के लिए संघर्ष किया जाए. इस बीच अमर सिंह को देखने मुलायम सिंह के परिवार से, मुलायम सिंह समेत लगभग पंद्रह लोग सिंगापुर गए. लेकिन अमर सिंह जिस एक सदस्य को सिंगापुर में देखना चाहते थे, वह सिंगापुर नहीं गया.

फोटो- प्रभात पाण्डेय

राम गोपाल यादव मुलायम सिंह के भाई हैं. रामगोपाल यादव को समाजवादी पार्टी में शालीन, समझदार व्यक्ति माना जाता है तथा कहा जाता है कि जानकारी में भी उनका कोई जवाब नहीं है. पिछले चार सालों में दिल्ली के संबंधों में मुलायम सिंह उनकी राय पर निर्भर होने लगे थे. रामगोपाल यादव अकेले व्यक्ति हैं, जो मुलायम सिंह से बिना संकोच, बिना डर के बातें कर सकते हैं. रामगोपाल यादव ने मुलायम सिंह यादव को विधानसभा चुनावों के बाद पार्टी के लोगों की राय बतानी शुरू की. मुलायम सिंह को पार्टी में फैले असंतोष के साथ विभिन्न प्रकार के संदेह भी बताए. रामगोपाल यादव ने शंका ज़ाहिर की कि कुछ और नेता पार्टी छोड़ कर जा सकते हैं. अमर सिंह ने सिंगापुर से लौटने के बाद भी अपनी बेबाक और तल्ख टिप्पणियां बंद नहीं कीं. डिंपल यादव की हार को उन्होंने मुलायम सिंह के परिवार का अति आत्मविश्वास कहा, जो हार का कारण बना.

रामगोपाल यादव ने बिना मुलायम सिंह यादव को सूचित किए सार्वजनिक रूप से कह दिया कि कोई भी व्यक्ति पार्टी से ऊपर नहीं है. अमर सिंह ने इसे अपने ऊपर हमला माना और समझ लिया कि आख़िरी गिनती प्रारंभ हो गई है. सार्वजनिक बयानबाजी शुरू हो गई. अमर सिंह ने इस बार सार्वजनिक रूप से इस्तीफ़े का ऐलान कर दिया.

मुलायम सिंह इस घटनाक्रम से परेशान थे. वह नहीं चाहते थे कि अमर सिंह और उनकी पार्टी अलग हो. उन्होंने कोशिशें कीं, सार्वजनिक रूप से अमर सिंह के ख़िलाफ़ कोई टिप्पणी नहीं की. इतना ही नहीं, उन्होंने फिर रामगोपाल यादव के ऊपर दबाव डाला कि वह अमर सिंह से खेद प्रगट करें. रामगोपाल यादव ने किया भी. लेकिन अमर सिंह ने इसे सार्वजनिक कर दिया, कहा कि रामगोपाल यादव ने मुझसे माफी मांगी है.

इस फोन कॉल का सार्वजनिक होना समाजवादी पार्टी में भूकंप का कारण बना. रामगोपाल यादव, अखिलेश यादव, शिवपाल यादव ने मिलकर साफ़ कर दिया कि वे अब अमर सिंह के साथ रहने की जगह राजनीति से अलग होना पसंद करेंगे. पार्टी के सभी नेता रामगोपाल यादव के साथ खड़े हो गए. फोन पर पार्टी नेताओं और कार्यकर्ताओं ने मुलायम सिंह से कहना शुरू कर दिया कि वे अमर सिंह का इस्तीफ़ा मंजूर कर लें. उधर अमर सिंह के समर्थन में संजय दत्त, जयाप्रदा, जया बच्चन और मनोज तिवारी खुलकर आ गए. रामगोपाल यादव को लगा कि अगर जल्दी कार्रवाई नहीं हुई तो कुछ विधायक भी अमर सिंह के साथ जा सकते हैं, क्योंकि अमर सिंह के पास पैसा है.

राजनीति में पिछले सालों में दो जोड़ियां काफ़ी चर्चित रही थीं. एक मुलायम सिंह यादव और अमर सिंह की तथा दूसरी नीतीश कुमार और राजीव रंजन सिंह उर्फ ललन सिंह की. दोनों ही जोड़ियां टूट गईं. अमर सिंह बिहार से नई राजनैतिक पारी की शुरुआत करने वाले हैं, जिसमें ललन सिंह उनके राजनैतिक सहयोगी बनने जा रहे हैं.

मुलायम सिंह यादव ने पार्टी को पुनः संघर्ष के रास्ते पर ले जाने का फ़ैसला लिया है. वह रोज आजकल सौ से ज़्यादा लोगों से मिल रहे हैं. दूसरी ओर मुलायम सिंह ने ओम प्रकाश चौटाला के अलावा प्रकाश करात और वर्धन से भी संपर्क किया है. मुलायम सिंह एक बार फिर ग़ैर भाजपा, ग़ैर कांग्रेस गठबंधन बनाना चाहते हैं, जिसके लिए वह वामपंथी दलों के अलावा लालू यादव, रामविलास पासवान, चंद्रबाबू, जयललिता और चौटाला के लगातार संपर्क में हैं.

रामगोपाल यादव के पास अब यह ज़िम्मेदारी आई है कि वह इस गठबंधन को शक्ल दें. पार्टी में उन्होंने पुराने समाजवादियों बृजभूषण तिवारी, मोहन सिंह और सुनीलम् को मुख्य ज़िम्मेदारियां दी हैं.

एक सलाह अमर सिंह को और एक सलाह मुलायम सिंह के साथियों को देना चाहते हैं. राजनीति में साथ छूटने का मतलब मानवीय रिश्तों का ख़ात्मा नहीं होता. अलग तो लोहिया और जयप्रकाश भी हुए थे. वी पी सिंह और चंद्रशेखर भी हुए थे. यहां तक कि चंद्रशेखर और मुलायम सिंह भी अलग हुए थे. वैसी ही शालीनता दिखानी चाहिए. हमारे पास दोनों पक्षों के नेताओं की भाषा और विषय दोनों ही हैं, लेकिन दोनों ही लिखने योग्य नहीं हैं. हमने सिर्फ़ संकेत दिए हैं. बाज़ार में अफ़वाहें फैली हैं कि अमर सिंह के पास मुलायम सिंह से जुड़ी सीडी हैं तो मुलायम सिंह के पास अमर सिंह के भ्रष्टाचार के सबूत. अफ़वाहें ही दंगे कराती हैं, दोनों पक्षों को अफ़वाहों के जाल में नहीं फंसना चाहिए. वरना ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाएगी, जो सिर्फ़ तमाशबीनों का मनोरंजन करेगी.

editor@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 1 अंक 49,
दिल्ली, 15 फरवरी–21 फरवरी 2010

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-47839990/11-23418962
विज्ञापन + 91 9873575318
प्रसार + 91 9810017924
फैक्स न. 0120-4783950

पृष्ठ-16 (+4 बिहार व झारखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

जॉर्ज फर्नांडीज़ के भाई माइकल भी डॉ. सुनीलम की इस बात से पूरा इत्तेफाक़ रखते हैं. वह कहते हैं कि जॉर्ज के साथ उनकी पत्नी और बेटा ही अन्याय कर रहे हैं.

ये जॉर्ज को मिटाने की साज़िश है !

रूबी अरुण

पच्चीस सालों तक आप किसी व्यक्ति की तरफ पलट कर नहीं देखते. पच्चीसियों बार वह व्यक्ति बीमार होता है, अस्पताल में दाख़िल होता है. आप उसकी ख़ैरियत तक नहीं पूछते. और, जब आपको अचानक पता चलता है कि जिंदगी से जूझता वह बीमार और लाचार आदमी तेरह करोड़ रुपयों का मालिक है तो रिश्तों की दुहाई देते हुए, स्नेह और आत्मीयता का आडंबर करते हैं और उसकी तीमारदारी के लिए पहुंच जाते हैं. संबंधों की आड़ में आप न सिर्फ़ उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ काम करते हैं, बल्कि देखभाल का दिखावा कर आप उस बेबस की इतनी सख्त निगरानी करते हैं कि उसकी सांसें घुटने लगती हैं. ऐसे में आपका नाग़वार प्यार साजिश ही तो नजर आएगा!

आपकी नीयत पर हजार सवाल उठेंगे. पूर्व रक्षा मंत्री जॉर्ज़ फर्नांडीज़ की कानूनी पत्नी लैला कबीर फर्नांडीज़ भी संशय के दायरे में हैं. पिछले पच्चीस सालों से अपने बेटे श्यान के साथ जॉर्ज फर्नांडीज़ की परछाई से भी दूर रहने वाली उनकी पत्नी लैला कबीर फर्नांडीज़ का जॉर्ज़ के प्रति मौज़ूदा रवैया डर पैदा करता है.

आख़िर क्या चाहती हैं लैला कबीर? जॉर्ज़ को हासिल करना या मिटाना? कहीं वह जॉर्ज़ से अपने बीते दिनों का बदला तो नहीं ले रहीं? उस जॉर्ज से, जो बीमारी की वज़ह से पुराना सब कुछ भूल चुका है. महज़ हालिया चीज़ें या फिर वे लोग याद हैं, जिनके साथ उन्होंने पिछले पच्चीस–तीस साल का हर पल शिद्दत से गुज़ारा है. अल्ज़ाइमर जैसी बीमारी के छठे स्टेज़ में पहुंच चुके जॉर्ज़ एक निर्दोष शिशु की तरह हो गए हैं. बीमारी से शरीर इतना जर्ज़र हो चुका है कि कोई उन्हें चोट पहुंचाना चाहे तो वह अपना बचाव तक नहीं कर सकते. पर लैला कबीर अपने बेटे श्यान के साथ जॉर्ज़ की लाचारी से बेहद क्रूरता के साथ खिलवाड़ कर रही हैं. जॉर्ज़ को आराम और सुकून की ज़िंदगी देने की बजाय लैला उन्हें दर–बदर कर रही हैं, जिससे जॉर्ज़ साहब की हालत और भी बिगड़ती जा रही है. पहले तो लैला ने जबरन जॉर्ज़ साहब को उस मकान 3, कृष्णमेनन मार्ग से दूर कर दिया, जहां वह दशकों से रहते आ रहे थे. जहां के न सिर्फ साज ओ सामां, बल्कि घास–मिट्टी तक से उन्हें ज़हनी लगाव है. उनकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ इलाज़ के नाम पर योग गुरु बाबा रामदेव के आश्रम हरिद्वार में चुपके से आधी रात को सबसे छुपाकर इसलिए ले जाकर रख दिया, ताकि वह उन अपनों से दूर हो जाएं, जिन्होंने लैला कबीर के साथ छोड़ जाने के बाद बेहद अजीज़ियत से उनकी हर लम्हा देखभाल की. एम्स के न्यूरो सर्जरी विभाग के उन डॉक्टरों से लैला ने सलाह लेना भी मुनासिब नहीं समझा, जो पिछले 15 सालों से जॉर्ज़ का इलाज़ करते आ रहे हैं. और अब, लैला उन्हें हरिद्वार से लेकर दिल्ली आ तो चुकी हैं, पर जॉर्ज़ को उन्होंने अपने पंचशील स्थित मकान में रखा है. जबकि जॉर्ज़ साहब वहां रहना ही नहीं चाहते. वह 3, कृष्णमेनन मार्ग के अपने पुराने बिस्तर पर सोने के लिए मचलते हैं. अच्छे–बुरे वक़्त में ईमानदारी से साथ निभाने वाली साथी जया जेटली और अपनी क़िताबों को तलाशते हैं. उन दोनों कुत्तों को ढूंढते हैं, जो बरसों से उनके साथ सुबह–शाम की चहलक़दमी करते रहे हैं. लेकिन लैला कबीर की मनमानी की वज़ह से जॉर्ज़ को ये छोटी–छोटी खुशियां भी मयस्सर नहीं हो पा रहीं. डॉक्टरों का कहना है कि जिस बीमारी से जॉर्ज़ ग्रसित हैं, उसमें अगर उन्हें सामान्य रखना है तो उनका हर वह सामान या मित्र पास होना चाहिए, जिसे वह खोजते हैं. पर शायद लैला ऐसा नहीं चाहतीं कि जॉर्ज़ ठीक हों.

दरअसल तस्वीर का यह ऐसा दुखद पहलू है, जिसकी ओर शायद किसी की नज़र नहीं. पूरी ज़िंदगी मज़दूरों के हक़ की लड़ाई लड़ने वाला, उन्हें आवाज़ देने वाला, व्यवस्था–प्रशासन और सरकार से निर्भीकता से लड़ने वाला नेता आज एक क़ैदी की तरह जी रहा है, लेकिन इस पर कोई चर्चा नहीं हो रही. बहस का मुद्दा तो कुछ और है. जॉर्ज की संपत्ति को लेकर उनकी ज़िंदगी में शामिल दो औरतों की लड़ाई. ज़माना बड़े चाव से इसे देख–सुन रहा है. अपनी सादगी, कर्मठता, सरकार के साथ भिड़ने की वजह से पिछले पचास सालों से चर्चित जॉर्ज की छवि, उनकी कर्मपूजा आज उनकी ही पत्नी और बेटे धूल–धूसरित कर रहे हैं.

समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय सचिव एवं मध्य प्रदेश से विधायक रह चुके डॉ. सुनीलम दशकों से जॉर्ज साहब के साथ हैं. बड़ी नाराज़गी से कहते हैं कि लैला कबीर फर्नांडीज़ को सिर्फ़ रिश्ते के आधार पर इस बात की कतई इजाज़त नहीं दी जा सकती कि वह जॉर्ज साहब जैसे समाजवादी–राष्ट्रवादी नेता को निजी संपत्ति की तरह इस्तेमाल करें. लैला जी को पति होने के नाते जॉर्ज फर्नांडीज़ ने तो कभी अपनी जागीर नहीं समझा. वह अपनी मर्ज़ी से पच्चीस साल पहले चली गईं. फिर अपने बेटे श्यान के साथ अमेरिका में रहने लगीं. और, जैसे ही मां–बेटे को पता चला कि उनके पास करोड़ों रुपये हैं, तो वे यहां आकर हिसाब–किताब करने लगे? तो फिर पच्चीस सालों के संबंध का भी हिसाब होना चाहिए. डॉ. सुनीलम का मानना है कि लैला और श्यान को इतना हंगामा करने की कोई आवश्यकता नहीं थी. वे क़ानूनी तौर पर अभी भी जॉर्ज साहब की पत्नी और बेटे हैं. लिहाज़ा संपत्ति पर उन्हीं का हक़ है. तो फिर इस तमाशे की क्या ज़रूरत है? उनकी पत्नी और बेटा जो सलूक उनके साथ कर रहे हैं, वह उन्हें जीते जी मारने जैसा है. यह प्यार तो हो ही नहीं सकता. यह सिर्फ़ साज़िश है.

जॉर्ज फर्नांडीज़ के भाई माईकल, पॉल और रिची भी डॉ. सुनीलम की इस बात से पूरा इत्तफाक़ रखते हैं. वह कहते हैं कि जॉर्ज के साथ उनकी पत्नी और बेटा ही अन्याय कर रहे हैं. वह पिछले पच्चीस सालों से हर लम्हा जॉर्ज का साथ निभा रही जया जेटली पर आरोप लगा रहे हैं. जबकि सच यह है कि जया जेटली ने न सिर्फ़ एक औरत, बल्कि एक मां की तरह जॉर्ज फर्नांडीज़ को संभाला है. बीमारी की हालत में जब जॉर्ज बेवक़्त किसी बात की जिद पकड़ लेते या नाराज़ हो जाते, तो जया जेटली बड़े धैर्य और स्नेह से जॉर्ज को समझातीं और जॉर्ज मान जाते. लोकसभा चुनाव 2009 के समय जया जेटली ने जॉर्ज को समझाने की बेहद कोशिश की कि वह चुनाव न लड़ें. लेकिन जॉर्ज अपने पुराने सहयोगियों की दगाबाज़ी से बड़े ही आहत थे. उन्होंने जया को साफ़ जवाब दे दिया. अब जया जेटली या तो उनका साथ देतीं या छोड़ देती. तब जया ने जॉर्ज का साथ देने का फ़ैसला किया. अगर जया को पैसों का लालच होता तो वह कभी का अपनी पावर ऑफ अटार्नी का ग़लत इस्तेमाल कर पैसे निकाल सकती थीं. पर उन्होंने सिर्फ़ जॉर्ज साहब के घर के ख़र्चों के लिए ही मामूली पैसे निकाले. ग़लत तो जॉर्ज की पत्नी लैला कबीर और बेटे श्यान ने किया. उन दोनों ने जॉर्ज से ज़बरन पावर ऑफ अटार्नी पर अंगूठा लगवा लिया. अब अपनी ग़लती छिपाने के लिए वे हाय–तौबा मचा रहे हैं.

जब जॉर्ज साहब रेलमंत्री थे, उस वक्त उनके सहयोगी रह चुके अजय बताते हैं कि जब उन्होंने 3, कृष्णमेनन मार्ग जाकर जॉर्ज फर्नांडीज़ से मिलना चाहा तो लैला कबीर और उनके बेटे श्यान ने आवास का गेट बंद करवा दिया.

हालांकि लैला और श्यान इस बात से साफ़ इंकार करते हैं कि उन्हें संपत्ति का कोई लालच है या जॉर्ज के रुपयों से कोई लेना–देना है. वे दोनों जया जेटली पर ऐसा आरोप लगाते हैं. पर शायद ही लोगों को मालूम है कि जॉर्ज ने जो अपनी वसीयत बनाई है, उसमें जया को सिर्फ़ अपनी किताबों का वारिस ही बनाया है. जॉर्ज साहब को साफ़ कपड़े पहनना और बिल्कुल चिकनी दाढ़ी बनाना बेहद भाता है. जब उनके हाथ बीमारी से कांपने लगे, तब जया बेहद एहतियात से उनकी दाढ़ी बनाती थीं. फिर जॉर्ज अपने गालों पर हाथ फिराकर तसल्ली करते. साफ़ चिकना चेहरा पाकर वह छोटे बच्चों की तरह ख़ुश हो जाते थे. चाय की सिप लेने के बाद तुरंत वह अपने होंठों को साफ़ करते थे, पर आज उन्हीं जॉर्ज की हालत ऐसी है कि वह कुछ खाने की कोशिश में कांपते हाथों की वजह से कपड़ा गंदा कर बैठते हैं.

पूर्व विधायक डॉ. सुनीलम पूछते हैं कि ऐसे बुरे वक़्त में इस समाजसेवी नेता के प्रति देश का क्या फर्ज़ बनता है? क्या यह हमारी ज़िम्मेदारी नहीं कि इस बुरे समय में हम जॉर्ज की मर्ज़ी जानने की कोशिश करें और उन्हें उनके मुताबिक़ जीने दें? क्या पारिवारिक मसला होने से हम इस बात से किनाराकशी कर लें और जॉर्ज के घुल–घुल कर ख़त्म होने का तमाशा देखें?

वाकई, इस वक़्त भी अगर देश और समाज ने जॉर्ज के प्रति अपना फ़र्ज़ नहीं निभाया तो हम ताज़िंदगी गुनाह से बरी नहीं हो पाएंगे.

ruby@chauthiduniya.com

सभी फोटो– प्रभात पाण्डेय

SAVE CASH FOR YOUR BUSINESS | USE BARTER

We are one of the worlds leading Barter Exchange Company operating out of India, Australia, New Zealand and Costa Rica, servicing over 5000 member businesses worldwide

In India, BBX works with more than 600 businesses and professionals from a wide spectrum of industries, facilitating Cashless Trade and creating New Business Opportunities

BBX now invites **Franchisees** from different parts of the country to be a part of this unique business opportunity

To know more, please contact:
Sachin at 9871531759 or 40587777
or email us at info@ebbx.in

BBX

BBX India Pvt. Ltd.
E-8, 2nd Floor, Kalkaji, New Delhi 19
011 - 4058 7777 | info@ebbx.in | www.ebbx.in
INDIA | AUSTRALIA | NEW ZEALAND | COSTA RICA

क्या मज़बूत सरकार का मतलब लोकतंत्र का अपहरण करने और दमन की हदों को पार कर जाने का लाइसेंस रखना होता है?

सच की ज़ुबान पर सरकार का पहरा

आदियोग

केंद्र सरकार की इस बेताला धुन पर कई राज्य सरकारें जुगलबंदी कर रही हैं कि माओवादी अमन और तरक़्क़ी के जानी दुश्मन हैं, देश और समाज के लिए सबसे बड़ा ख़तरा हैं. यह न्याय और अधिकार की आवाज़ को कुचल देने का आसान हथियार है. विकास के नाम पर ग़रीब–वंचित आदिवासियों का सब कुछ हड़प लेने की सरकारी मंशा के ख़िलाफ़ जो खड़ा हो, माओवादी का ठप्पा लगाकर उस पर लाठी–गोली बरसा दो या फिर उसे जेल पहुंचा दो. इस मायने में अगर छत्तीसगढ़ के हालात सबसे ख़राब हैं तो उड़ीसा के हालात भी कोई कम बुरे नहीं. पिछली 27 जनवरी को बुज़ुर्ग मार्क्सवादी–लेनिनवादी नेता गणनाथ पात्रा की गिरफ़्तारी यही बताती है कि छत्तीसगढ़ की तरह उड़ीसा में भी अघोषित आपातकाल लागू है और सच की ज़ुबान पर पहरे हैं.

पूरे राज्य में जारी विस्थापन विरोधी संघर्षों की पहली कतार में शामिल रहे 68 वर्षीय गणनाथ पात्रा का गुनाह यह था कि उन्होंने कोरापुट ज़िले के नारायनपटना ब्लॉक में सक्रिय चेसी मुलिया आदिवासी संघ (सीएमएएस) के पक्ष में खड़े होने और सरकारी दमन का मुखर प्रतिरोध करने का दुस्साहस किया. जबकि राज्य सरकार सीएमएएस को माओवादियों का खुला संगठन करार देकर उसके नेतृत्व का सफाया कर देने की तैयारी में है. उड़िया में चेसी मुलिया मतलब मज़दूर किसान.

फ़िलहाल, पिछले नवंबर माह से नारायनपटना में भय और असुरक्षा का माहौल है. पूरे ब्लॉक को लगभग सील कर दिया गया है. पुलिस और सुरक्षाबल सीएमएएस के लोकप्रिय नेता निचिका लिंगा एवं उनके साथियों की जान के पीछे हैं. ऐसे में सीएमएएस के अगुवा भूमिगत हैं. निचिका ने किशोरावस्था में बंधुआ मज़दूर की त्रासदी झेली और कच्ची उम्र में इस क्रूर सामंती प्रथा के ख़िलाफ़ बग़ावत करने का भी जोख़िम उठाया. कहते हैं कि दुखियारों को उनके दु:ख जोड़ते हैं. निचिका की पहल रंग लाई. वंचना और अत्याचार सहने की नियति को चुनौती देने के लिए ग़रीब आदिवासी जुटने लगे. इस तरह सीएमएएस का जन्म हुआ.

निचिका एवं उनके साथियों ने महसूस किया कि शराबखोरी की लत आदिवासियों को और पीछे ढकेलने का काम कर रही है. सीएमएएस ने शराब के ख़िलाफ़ मोर्चा जमाया और तीन साल पहले पूरे इलाक़े को शराब की भट्ठियों से आज़ाद करा दिया. इससे शराब के सौदागरों और पुलिस की कमाई का ज़रिया छिन गया. राज्य में कहने को यह क़ानून लागू है कि आदिवासियों की ज़मीन ग़ैर आदिवासियों के हाथों में नहीं जा सकती. सीएमएएस पिछले लगभग दस सालों से आदिवासियों की ज़मीन लौटाए जाने की लड़ाई लड़ रहा था, लेकिन संवैधानिक तरीक़े बेनतीजा निकले. आख़िरकार सीएमएएस के झंडे तले हज़ारों आदिवासियों ने अपने परंपरागत हथियारों से लैस होकर पिछले साल अप्रैल में धावा बोला और दो हज़ार एकड़ ज़मीन ग़ैर आदिवासियों के क़ब्ज़े से आज़ाद कराकर भूमिहीन आदिवासियों के बीच बांट दी. उस पर धान की रोपाई भी कर दी गई. संगठन ने जागरूकता पैदा की और यह सुनिश्चित किया कि खेती में रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों का इस्तेमाल कतई न किया जाए. इसका उत्साहजनक नतीजा सामने आया.

उड़ीसा के ज़्यादातर इलाक़े अकाल की चपेट में हैं. इस उदास–निराश माहौल के बीच नारायनपटना ब्लॉक से यह अच्छी ख़बर आई कि वहां धान की फ़सल ख़ूब लहलहाई. शराब बंदी ने आदिवासियों को जगाने और उनकी महिलाओं में ताक़त भरने का काम किया. ज़मीन पर आदिवासियों का क़ब्ज़ा सीएमएएस के बढ़ते प्रभाव का संकेत था. लेकिन, फ़सल की कटाई का समय आया तो इस ख़ुशखबरी को रौंदते हुए ऑपरेशन ग्रीन हंट की दस्तक आ धमकी. खड़ी फ़सल पर ज़मीन के अवैध क़ब्ज़ेदार रहे ग़ैर आदिवासियों की नज़र गड़ गई. इस तरह माओवादियों को दबोचने के नाम पर चलाया जा रहा अभियान आदिवासियों के पेट पर लात मारने का अभियान बनने लगा.

एक अनुमान के मुताबिक़, केवल उड़ीसा में सकल घरेलू उत्पाद के दोगुने मूल्य क़रीब 40 ख़रब रुपये के बॉक्साइट का भंडार है और उसे निचोड़ने के लिए कंपनियां लार टपका रही हैं. कोरापुट ज़िले में भी बॉक्साइट की खानें हैं, जिनका दोहन करने के लिए आदित्य बिड़ला की तीन कंपनियां जुटी हुई हैं. इसके लिए आदिवासियों की ज़मीन हड़पने की मुहिम जारी है. सीएमएएस का प्रतिरोध कंपनियों के लिए भारी रुकावट रहा है. मुनाफ़े की लूट के लिए लेमन ग्रास को सरकारी बढ़ावा दिए जाने के ख़िलाफ़ भी सीएमएएस आवाज़ बुलंद कर रहा था. नारायनपटना और उसके आसपास की जिन ज़मीनों पर धान बोया जाता रहा है, उनके 70 फ़ीसदी हिस्से पर अब लेमन ग्रास की खेती हो रही है. लेमन ग्रास से निकला इत्र नहाने के साबुन को सुगंधित बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है. ज़ाहिर है कि रतनजोत की तरह लेमन ग्रास भी खाद्य सुरक्षा के लिए गंभीर ख़तरा है. लेकिन, पूंजीपतियों के हितों के सामने सरकारों को अपनी ग़रीब जनता की भूख की चिंता नहीं सताती. बहरहाल, राज्य सरकार से टकराने की हिमाक़त आख़िरकार सीएमएएस को महंगी पड़ी.

गुजरी 20 नवंबर को स्थानीय पुलिस को सीएमएएस को सबक सिखाने का मौक़ा मिल गया. उस दिन क़रीब दो सौ आदिवासी नारायनपटना पुलिस थाने पर एकत्र हुए. इनमें आधी से अधिक महिलाएं थीं. इससे दो माह पहले सीएमएएस ने गांवों में सुरक्षाबलों की तैनाती और उनकी ज़्यादतियों के ख़िलाफ़ रैली की थी. तब सीएमएएस को लिखित आश्वासन मिला था कि उसे आइंदा ऐसी शिक़ायत करने का मौक़ा नहीं मिलेगा. इसके बावजूद 18 और 19 नवंबर को सुरक्षाबलों ने पांच गांवों में तलाशी के नाम पर आदिवासियों को मारा–पीटा और महिलाओं के साथ बदसलूकी की. उन्हें फ़सल की कटाई करने से रोक दिया गया. आदिवासी इसकी शिक़ायत दर्ज़ करने और यह जवाब मांगने भी गए थे कि आख़िर लिखित वायदे को क्यों तोड़ा गया, लेकिन थाना प्रभारी उन्हें सुनने को तैयार नहीं थे. उल्टे उन्हें गरिया–धमका रहे थे. किसी तरह सीएमएएस के छह नेताओं ने थाने में प्रवेश किया. उनके और थाना प्रभारी के बीच तीखी नोकझोंक हुई. अचानक थाना प्रभारी चीखने लगा कि उस पर हमला हो गया है और थाने की छत पर तैनात सीआरपीएफ और कोबरा बटालियन ने अंधाधुंध फायरिंग शुरू कर दी. सिंगन्ना को सीने पर दस गोलियां लगीं और कार्यकर्ता नचिका एंड्रू के साथ उनकी मौक़े पर मौत हो गई. लगभग 60 आदिवासी घायल हुए. इसी के साथ गिरफ़्तारियों का सिलसिला शुरू हो गया. इलाक़े को आदिवासियों का शिकार करने का मैदान बना दिया गया. सीएमएएस के कार्यकर्ता भूमिगत हो गए. फिर भी फायरिंग में मारे गए सिंगन्ना और एंड्रू के अंतिम संस्कार के मौक़े पर 23 नवंबर को पोड़ापडर गांव की ओर आदिवासियों का जैसे सैलाब उमड़ पड़ा.

ढेरों सवाल हैं, जिनके जवाब ग़ायब हैं. फायरिंग का आदेश किसने दिया? क्या इसके लिए मजिस्ट्रेट की इजाज़त ली गई? अगर निहत्थे आए आदिवासियों से सचमुच क़ानून–व्यवस्था के लिए कोई ख़तरा था तो उन्हें तितर–बितर करने के लिए अश्रुगैस या दूसरे कम घातक तरीक़ों का इस्तेमाल क्यों नहीं किया गया? याद रहे कि आदिवासी तीर–धनुष के अपने परंपरागत हथियारों के बग़ैर थे. इसलिए कि इससे पहले इन्हीं हथियारों के कारण उन्हें मीडिया के सामने माओवादी करार दिया जाता रहा है.

और अब, आदिवासियों को खटका लगा रहता है कि कब रात के अंधेरे में नागों और बिच्छुओं की फौज उनके गांव को घेर ले, दरवाज़ा तोड़कर उनके घरों में दाख़िल हो, उन्हें बूटों से रौंदे और उनका सब कुछ तबाह कर दे. आदिवासी क्या करें और क्या न करें. गांव में बने रहना ख़तरे से ख़ाली नहीं और जंगल भाग जाना भी ख़तरे से कोई बचाव नहीं. सुरक्षाबल तो माओवादियों की तलाश में चप्पा–चप्पा छान रहे हैं. निरीह आदिवासियों को जंगल में ढेर कर देना और उन्हें माओवादी घोषित कर देना तो बस उनके ट्रिगर दबाने का कमाल होगा.

फ़िलहाल, सुरक्षाबलों के छापे में घर–घर से हथियार ज़ब्त किए जा रहे हैं. तीर–धनुष के अलावा इसमें कुल्हाड़ी, हथौड़ा, हंसिया, चाकू और आरी वग़ैरह भी शामिल है. सुरक्षाबलों की हिदायत है कि आदिवासी इन हथियारों को रखने से बाज आएं, वरना उनके ख़िलाफ़ कड़ी कार्रवाई की जाएगी. यानी लकड़ी चीरने–फाड़ने, धान की कटाई करने या सब्ज़ी–जानवर काटने जैसे रोजमर्रा के काम बंद. यह पाबंदी दाढ़ी बनाने के ब्लेड या उस्तरे पर भी लगनी चाहिए, क्योंकि उससे किसी का धड़ भी अलग किया जा सकता है. सूजे को भी क्यों छोड़ा जाए, जो भले ही चावल की बोरियों को सिलने के काम आता है, लेकिन उसे किसी के पेट में भी तो घोंपा जा सकता है.

पुलिस फायरिंग के बाद नारायनपटना जलने लगा. सरकार नहीं चाहती कि उसके दमन की कोई कहानी बाहर आए. इससे सरकारी कामकाज में बाधा पहुंचती है. स्थानीय मीडिया प्रशासन के कब्जे में है और वह सरकारी ज़ुबान में बोलने का आदी है. ऐसे में राजनीतिक कार्यकर्ता तपन मिश्रा ने हालात का जायज़ा लेने और मीडिया तक सच पहुंचाने की गरज से नारायनपटना का दौरा करने का फ़ैसला किया, लेकिन 29 नवंबर को बीच रास्ते में उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया. ज़िला पुलिस अधीक्षक ने उन्हें मीडिया के सामने कट्टर माओवादी के तौर पर पेश करते हुए बताया कि वह बागियों को हथियारों का प्रशिक्षण देने में शामिल रहे हैं. उन पर देशद्रोह का मामला थोप दिया गया.

राज्य के दमन से पैदा हालात का जायज़ा लेने के लिए लोकतांत्रिक अधिकारों की पैरवी कर रही महिलाओं का दल नौ दिसंबर को नारायनपटना पहुंचा था. इसमें नई दिल्ली समेत तमिलनाडु, छत्तीसगढ़ और उड़ीसा की भी महिला कार्यकर्ता शामिल थीं. इस दल को स्थानीय पुलिस ने इलाक़े का दौरा करने से रोक दिया और थाने के बाहर ग़ैर आदिवासी ज़मीन माफ़ियाओं एवं उनके गुंडों की भीड़ जुटा ली. थाने से बाहर आते ही भद्दी गालियों के साथ महिला जत्थे की पिटाई की गई और उसे सीएमएएस के ख़िलाफ़ फूटे जनता के गुस्से का नाम दे दिया गया. याद रहे कि इसी तर्ज पर 13 दिसंबर को छत्तीसगढ़ में दंतेवाड़ा की ओर जा रही 10 राज्यों की प्रतिनिधि महिलाओं को भी हैरान–परेशान किया गया था और उन्हें रायपुर वापस लौटने के लिए मजबूर कर दिया गया था.

जैसे दंतेवाड़ा में सरकारी सहयोग और संरक्षण में सलवाजुडूम यानी शांति वाहिनी का गठन हुआ, ठीक उसी तरह उड़ीसा में सत्तारूढ़ बीजू जनतादल एवं कंपनियों के सहयोग से शराब व्यापारी और ज़मीन के लुटेरे शांति समिति के नाम से सीएमएएस के ख़िलाफ़ एकजुट हो गए हैं.

क्या एकरूपता है! तो क्या मज़बूत सरकार का मतलब लोकतंत्र का अपहरण करने और दमन की हदों को पार कर जाने का लाइसेंस रखना होता है? पिछली बार झारखंड के मुख्यमंत्री की कुर्सी पर बैठते ही शिबू सोरेन ने कंपनियों की राह को आसान बनाना अपनी सरकार की पहली प्राथमिकता बताया था. जिंदल, आर्सेलर मित्तल, इस्सर, टाटा, भूषण जैसी देशी–विदेशी बड़ी कंपनियों के साथ सौ से अधिक करारनामे पर हस्ताक्षर भी हुए. लेकिन आदिवासियों के तगड़े विरोध के सामने और माओवाद के ख़तरे का जाप करने के बावजूद गुरुजी की प्राथमिकता धरी की धरी रह गई. इन कंपनियों की परियोजनाएं काग़ज़ी खानापूर्ति से आगे नहीं बढ़ सकीं. दमन का सरकारी चक्का रफ़्तार नहीं पकड़ सका, उल्टे लगातार धीमा होता गया. तब उनकी सरकार जुगाड़िया गठबंधन की कमज़ोर रस्सी के भरोसे बनी थी.

और अब, जैसे–तैसे दोबारा मुख्यमंत्री बने उन्हीं गुरुजी के डंके की चोट का पुराना स्वर फ़िलहाल ढीला और गोलमोल है. इस बार उनकी सरकार के सामने समझौतापरस्ती और अधिक नाज़ुक रस्सी पर नटगिरी करने की मजबूरी है. हल्का सा झटका भी उनकी सरकार की कमर तोड़ सकता है. कंपनियों के प्रेम में विस्थापन विरोधी आंदोलनों के साथ सख्ती करने में जोख़िम है. झारखंड सरकार से उलट छत्तीसगढ़ और उड़ीसा की सरकारें बहुमत में हैं. उनके सामने औंधे मुंह गिर जाने का ख़तरा नहीं है. और, इसीलिए माओवाद से जूझने के नाम पर दोनों राज्यों में न्याय और अधिकार की आवाज़ों के कत्लेआम का माजरा सबके सामने है. तो क्या अल्पमत की सरकारें ग़रीब–गुरबों के लिए वरदान होती हैं कि अपेक्षाकृत कम दमनकारी होती हैं? मौजूदा निजाम में कमज़ोर सरकारें लोकतंत्र की सेहत के लिए ज़्यादा मुफ़ीद होती हैं?

feedback@chauthiduniya.com

एक अनुमान के मुताबिक़, केवल उड़ीसा में सकल घरेलू उत्पाद के दोगुने मूल्य क़रीब 40 ख़रब रुपये के बॉक्साइट का भंडार है और उसे निचोड़ने के लिए कंपनियां लार टपका रही हैं. कोरापुट ज़िले में भी बॉक्साइट की खानें हैं, जिनका दोहन करने के लिए आदित्य बिड़ला की तीन कंपनियां जुटी हुई हैं. इसके लिए आदिवासियों की ज़मीन हड़पने की मुहिम जारी है.

सभा को संबोधित करते गणनाथ

हाल ही में 20 ट्रेड यूनियन प्रतिनिधियों के साथ सचिवालय में हुई बैठक विफल हो गई और उन्होंने मज़दूर नेताओं की बात मालिकों तक पहुंचाने का आश्वासन दिया.

चटकलिया मज़दूरों पर लटका जूट का फंदा

ताला बंद जूट मिलों के सामने ऐसे दृश्य आम हैं

फेर दिहलस गाचा चटकल, मुंहझौंसा ताला लटकल
नोकरिया अब हम कहां पाईं ए राम!
बहिनी के गवना बा, बिटिया सयान बा,
बाबू जी के दवा चाहीं, टूटल पलान बा,
देशवा लउट कइसे जाईं हे राम!

बिमल राय

कोलकाता के पास टीटागढ़ के जूट मिल मज़दूर शाम को चौपाल में जब लोक गायिका प्रतिभा सिंह का यह गीत गाते हैं तो माहौल गमगीन हो जाता है. ढोलक की थाप और झाल की झनकार में सिसकते आंसुओं की आवाज़ भले ही दब जाती हो, पर जैसे-जैसे समय बीत रहा है, वैसे-वैसे जूट मज़दूरों की बस्तियों में दरिद्रता का अंधेरा गहराता जा रहा है. सूदखोरों की चांदी है. हताशा के आख़िरी छोर पर पहुंच गए हैं चटकलिया मज़दूर. पिछले साल 14 दिसंबर से पश्चिम बंगाल की 54 में से 52 जूट मिलों के 2,50,000 मज़दूर बेमियादी हड़ताल पर हैं. पांच चक्र की त्रिपक्षीय वार्ताओं के विफल होने के बाद उन्होंने यह रास्ता अख्तियार किया. हड़ताल में वाम ट्रेड यूनियनें, इंडियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस और भारतीय मज़दूर यूनियन सहित कुल 20 यूनियनें शामिल हैं. राज्य की जो दो मिलें खुली हैं, उनमें तृणमूल कांग्रेस की इंडियन नेशनल तृणमूल ट्रेड यूनियन कांग्रेस का दबदबा है. अन्य दस मिलें भी बंद होने की कगार पर हैं, क्योंकि उनके मालिकों को पर्याप्त मुनाफ़ा नहीं हो रहा है. मालूम हो कि भारी घाटे के कारण राज्य की पांच सरकारी जूट मिलें बंद हो चुकी हैं.

सोचा जा सकता है कि बंगाल के जूट श्रमिक अभी किस अवस्था में जी रहे होंगे. त्रिपक्षीय वार्ताओं के लंबे-लंबे दौर चल रहे हैं. केंद्र हो या राज्य सरकार, सब जनता की भलाई का दावा करती हैं, पर समाधान नहीं निकल रहा है. यूनियन नेताओं को भी श्रमिकों ने ही चुना है, पर उन्हें गतिरोध की उलझी गुत्थी सुलझाने का कोई छोर नहीं मिल रहा है. पिछले दशक में 2002 और 2004 में राज्य की जूट मिलें बंद हुई थीं, पर महीने भर में हल निकल आया. इसी तरह 2007 में 63 और 2008 में 18 दिनों तक जूट हड़ताल चली थी. इस बार की हड़ताल के भी दो माह पूरे होने को हैं. जूट मिल मालिक अस्थायी एवं ठेका श्रमिकों की सेवाएं लेने पर जोर दे रहे हैं और वेतन को उत्पादकता से जोड़ रहे हैं. राज्य सरकार शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में ख़ुद ही ठेका प्रथा पर उतर आई है. कुछ और क्षेत्रों में ठेकेदारी शुरू करने की तैयारी है और इसी वजह से वह अपना हाथ बंधा हुआ महसूस कर रही है. इसके अलावा मिल मालिक किसी भी तरह की वार्ता के लिए यूनियनों की एक इकाई गठित करने की मांग कर रहे हैं. अक्सर देखा गया है कि समझौते से कुछ यूनियनें असहमत हो जाती हैं और मिल में विवाद एवं अशांति की स्थिति बनी रहती है.

हड़ताल के 46वें दिन 28 जनवरी को हुई त्रिपक्षीय वार्ता में मिल मालिकों के प्रतिनिधियों ने संशोधित वेतन और बकाए को किस्तों में चुकाने का प्रस्ताव किया. इस पर यूनियनों का रुख़ थोड़ा नरम हुआ है, लेकिन गतिरोध जस का तस है. मालूम हो कि पूरे देश में क़रीब 50 लाख लोग अपनी जीविका के लिए जूट उद्योग पर आश्रित हैं. इनमें 50 लाख किसान हैं और छह लाख लोग श्रमिक, छोटे व्यापारी और ब्रोकर हैं. पूरे देश के जूट उत्पादन में पश्चिम बंगाल का हिस्सा आधा है और कच्चे जूट के उत्पादन में राज्य के क़रीब 40 लाख किसान लगे हुए हैं. पैकेजिंग के लिए सिंथेटिक सामग्रियों के चलन के बढ़ते ही इस उद्योग पर संकट के बादल मंडराने लगे. पिछले साल सितंबर में आर्थिक मामलों की कैबिनेट कमेटी ने सरकारी एजेंसियों द्वारा ख़रीदी गई चीनी और अनाज की पैकेजिंग जूट के बस्तों में ही करने के क़ानून को बहाल रखा. मालूम हो कि 1987 के जूट पैकेजिंग मटीरियल (कंपल्सरी यूज इन पैकेजिंग कमोडिटीज) अधिनियम की वजह से ही भारत के कुल जूट उत्पादन का 58 प्रतिशत हिस्सा खप जाता है. वैसे पिछले साल केंद्रीय कपड़ा मंत्रालय के एक चौथाई चीनी एवं अनाज की पैकेजिंग में सिंथेटिक सामग्रियों के उपयोग की अनुमति देने से कच्चे जूट और जूट के बस्तों की क़ीमतों में भारी गिरावट आई. जूट उद्योग की लड़खड़ाती हालत के लिए मध्य पूर्व और यूरोप में जूट की क़ीमतों में हुई कमी भी ज़िम्मेदार है.

सूनी पड़ी जूट मिलें: कभी यहां भी चहल पहल नज़र आती थी

सोचा जा सकता है कि बंगाल के जूट श्रमिक अभी किस अवस्था में जी रहे होंगे. त्रिपक्षीय वार्ताओं के लंबे-लंबे दौर चल रहे हैं. केंद्र हो या राज्य सरकार, सब जनता की भलाई का दावा करती हैं, पर समाधान नहीं निकल रहा है. यूनियन नेताओं को भी श्रमिकों ने ही चुना है, पर उन्हें गतिरोध की उलझी गुत्थी सुलझाने का कोई छोर नहीं मिल रहा है.

पिछले तीन सालों में राज्यवार जूट उत्पादन

समय : जून-जुलाई/क्षेत्रफल : 000 हेक्टेयर में/ मात्रा 000 गांठ (बेल्स)

	2006-07		2007-08		2008-09, (अनुमानित)	
राज्य	क्षेत्रफल	उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन
पश्चिम बंगाल	595	8411	610	8216	584	7990
बिहार	127	12583	131	1251	147	1402
झारखंड	–	–	–	–	–	–
असम	58	559	60	657	61	674
उड़ीसा	5	48	6	50	11	104
उत्तर प्रदेश	–	–	–	–	0.16	1
त्रिपुरा	1	4	0.5	4	1	8
मेघालय	4	35	4	35	6	50

पिछले तीन सालों में जूट व जूट उत्पादों का आयात

मात्रा : मीट्रिक टन और मूल्य : रुपये/लाख में

अवधि	2006-07		2007-08		2008-09	
	क़ीमत	मात्रा	क़ीमत	मात्रा	क़ीमत	मात्रा
कच्चा जूट	59,042	8,900.31	1,71,800	19672.39	94,363	15,031.15
जूट उत्पाद	70,935	20299.48	57,688	13809.41	60932	17,162.87

28 जनवरी को मंत्रिमंडल ने आधुनिकीकरण के लिए जूट मिल मालिकों को दी जाने वाली सब्सिडी की सीमा 75 लाख से बढ़ाकर 3.5 करोड़ रुपये कर दी. इसमें भी पूर्वोत्तर की नई और वर्तमान जूट मिलों के लिए सब्सिडी की सीमा एक करोड़ रुपये होगी, जबकि देश के बाक़ी राज्यों के लिए यह सीमा 75 लाख रुपये है. इस स्कीम के लिए कुल योजना आवंटन 80 करोड़ रुपये का है. उपभोक्ता मामलों, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय ने रबी की फ़सलों के लिए कपड़ा मंत्रालय से 3.80 लाख बेल जूट बैग की मांग की थी, पर हड़ताल को देखते हुए वह इस मात्रा को कम करना चाहती है, क्योंकि फ़सल आने तक इतना उत्पादन नहीं हो पाएगा. हालांकि इंडियन जूट मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन के चेयरमैन संजय कजरिया ने कहा है कि अगर यह मात्रा कम की गई तो जूट मिलों का फिर से खुलना मुश्किल हो जाएगा.

हड़ताल तोड़ने के लिए मुख्यमंत्री बुद्धदेव भट्टाचार्य की कोशिशें भी अभी तक विफल साबित हुई हैं. हाल ही में 20 ट्रेड यूनियन प्रतिनिधियों के साथ सचिवालय में हुई बैठक विफल हो गई और उन्होंने मज़दूर नेताओं की बात मालिकों तक पहुंचाने का आश्वासन दिया. भट्टाचार्य ने एक पत्र में वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी से हस्तक्षेप करने का आग्रह किया है. उधर संजय कजरिया ने बताया कि 2010-11 के जूट वर्ष में केंद्र सरकार ने 9.7 लाख गांठ (बेल) की कुल मांग का 78 प्रतिशत हिस्सा प्लास्टिक सेक्टर को दे दिया है. उन्होंने बताया कि पिछले आठ वर्षों से केंद्र सरकार ख़ुद ख़रीदने वाले जूट बैगों की उचित क़ीमत नहीं दे रही है, जिससे जूट उद्योग को कुल 900 करोड़ रुपये का घाटा हुआ है. सरकार ने वर्ष 2009 की नए टैरिफ कमीशन की रिपोर्ट भी लागू नहीं की है, जिससे उद्योग के नुक़सान के एक हिस्से की भरपाई हो जाती. इसके अलावा हड़ताल में शामिल 2.6 लाख श्रमिकों की मज़दूरी के मद में 400 करोड़ रुपये का नुक़सान हुआ है. हड़ताल से 2010-11 के जूट सीजन में राज्य के क़रीब 40 लाख किसानों को जूट की उचित क़ीमत मिलने की उम्मीद नहीं है, क्योंकि मिलें ऊंची क़ीमत पर कच्चा जूट ख़रीदने की हालत में नहीं होंगी. ज़ाहिर है, हड़ताल जितनी लंबी खिंचेगी, जूट उद्योग का उतना ही नुक़सान होगा.

यह बताने की बात नहीं कि हड़ताल से प्लास्टिक लॉबी को सीधा फ़ायदा होगा. प्लास्टिक बस्तों की घरेलू खपत तो बढ़ेगी ही, निर्यात भी कई गुना बढ़ जाएगा. इस साल बांग्लादेशी जूट उद्योग एवं निर्यातकों को भारी लाभ होने की उम्मीद है. इस साल बांग्लादेश से भारत में कच्चे और तैयार जूट का निर्यात 517 प्रतिशत बढ़ जाएगा. हड़ताल से लाभ उठाने के चक्कर में कच्चे जूट के व्यापारियों द्वारा बड़ी मात्रा में जमाखोरी की भी आशंका है. नेशनल यूनियन ऑफ जूट वर्कर्स के संयुक्त सचिव एवं इंटक नेता मास्टर निजाम ने बताया कि बंगाल की 52 जूट मिलों में मज़दूरों की ग्रेच्युटी के मद में 350 करोड़ और पीएफ के 425 करोड़ रुपये बकाया हैं. उनके मुताबिक़, फरवरी 2007 से महंगाई भत्ता भी बंद है. 890 प्वाइंट की दर से मिलने वाले महंगाई भत्ते के रूप में हर श्रमिक को प्रति माह 1691 रुपये कम मिल रहे हैं. इस मद में हर श्रमिक की 45 से 46 हज़ार रुपये तक की रक़म बकाया है. यही नहीं, चटकलों में पुरुषों के रिटायर होने की उम्र 58 साल है, पर महिलाओं को 55 साल की उम्र में ही रिटायर कर दिया जाता है. ट्रेड यूनियनें कई समस्याओं के लिए केंद्र की नीतियों को ज़िम्मेदार मानती हैं. जूट का मामला केंद्र के दायरे में आता है और राज्य सरकार सिर्फ़ क़ानून एवं व्यवस्था तथा श्रम क़ानूनों का पालन कराने तक सीमित रहती है. मास्टर निजाम के मुताबिक़, जूट मिल मालिक पीएफ और ग्रेच्युटी के स्थापित नियमों की खुलेआम धज्जियां उड़ाते हैं. उन्होंने यह भी मांग की कि सरकार किसानों का 100 प्रतिशत जूट ख़रीदने की ज़िम्मेदारी ले, ताकि किसानों का हक़ बिचौलिए न छीन सकें.

भाकपा नेता गुरुदास दासगुप्ता ने बताया कि जूट मिल मालिकों ने पांच जनवरी 2002 को वाममोर्चा सरकार की मध्यस्थता वाले ऐतिहासिक समझौते का उल्लंघन किया है और वे उत्पादकता से जुड़े वेतन का नाजायज़ लाभ उठा रहे हैं. ठेका श्रमिकों की भी कई श्रेणियां जैसे-वाउचर मज़दूर, अस्थायी मज़दूर एवं जीरो श्रमिक बना दी गई हैं. इस तरह ठेका श्रमिकों को हर रोज 200 से भी कम रुपये दैनिक मज़दूरी के रूप में मिलते हैं.

पीएफ और ईएसआई की सुविधा तो दूर, उन्हें साल में पूरे दिन काम की भी गारंटी नहीं है. इन ठेका श्रमिकों को स्थायी श्रमिकों की तुलना में आधे यानी साल में औसतन 35000 रुपये मिलते हैं. चाय बागानों के बाद राज्य का जूट उद्योग बहुत पहले से बीमार चल रहा है. अर्जुन मोटरसाइकिल और नैनो कार के बवाल में ये दो ऐसे क्षेत्र हैं, जिनकी हालत लगातार ख़राब हो रही है. यह भी ग़ौरतलब है कि इन दोनों क्षेत्रों में 60 प्रतिशत से ज़्यादा श्रमिक हिंदीभाषी राज्यों के हैं. इनमें सबसे ज़्यादा संख्या बिहार (जूट उद्योग) और झारखंड (चाय उद्योग) से आए लोगों की है. वैसे पश्चिम बंगाल देश के उन गिने-चुने राज्यों में से है, जहां ट्रेड यूनियनों के ख़िलाफ़ बड़े पैमाने पर विद्रोह हो चुके हैं. एंबेसडर कार बनाने वाली हिंदुस्तान मोटर्स की हिंद मोटर इकाई में वाम ट्रेड यूनियनों की श्रमिक विरोधी नीति के ख़िलाफ़ संग्रामी श्रमिक यूनियन बनी थी. तो क्या जूट उद्योग में भी ऐसी कोई संभावना है, सोचने की बात है. कुछ लोग यह भी कहने वाले हैं कि इन दोनों क्षेत्रों की हालत इसलिए ख़राब की जा रही है, क्योंकि इनमें हिंदीभाषियों की संख्या ज़्यादा है और इसमें ट्रेड यूनियनों के कुछ बड़े-बड़े नेता शामिल हैं. अगर ऐसा है तो सोचना होगा श्रमिकों को ही, पहल ख़ुद करनी होगी.

मिलों के बंद होने से परेशान कामगारों का धरना प्रदर्शन

feedback@chauthiduniya.com

सुरक्षाबलों और आतंकियों के बीच होने वाली मुठभेड़ में अक्सर आम आदमी को अपनी जान गंवानी पड़ती है.

सरकार, जनता और मानवाधिकार का भ्रम

यह एक अजीब पहेली है कि जो सरकार मानवाधिकार की गारंटी देती है, उसी पर मानवाधिकार हनन का आरोप लगता है. एक तरफ यह अपने नागरिकों को मौलिक अधिकार देती है तो दूसरी तरफ़ आर्म्ड फोर्स स्पेशल पावर एक्ट (अफसपा) जैसे क़ानून बनाकर सुरक्षाबलों को निरंकुश बना देती है. आख़िर ये विरोधाभास क्यों है?

शशि शेखर

भारतीय लोकतंत्र में लोक और तंत्र के बीच जो गहरी खाई है, उससे न सिर्फ़ लोकतांत्रिक मूल्यों का ह्रास हुआ है, बल्कि लोगों के गरिमामय जीवन जीने के लिए ज़रूरी अधिकारों मसलन मानवाधिकार का भी हनन हुआ है. यह सिलसिला बदस्तूर जारी है और इसमें सरकारी मशीनरी की संलिप्तता भी कम नहीं है. महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण कानून (मकोका) और अफसपा जैसे क़ानून बना कर सरकार आम आदमी को क्या संदेश देनी चाहती है, यह समझ से परे है. दूसरी तरफ़ बच्चे और स्कूल अब माओवादियों के निशाने पर आ गए हैं. मानवाधिकार हनन न होने का आश्वासन देते रहे. फिर भी देश के कई हिस्सों में आम लोगों की बेवजह गिरफ़्तारी, हवालात में मौत और फ़र्ज़ी मुठभेड़ की ख़बरें आती रहीं.

नक्सल विरोधी अभियान के नाम पर डॉ. विनायक सेन को जेल में डालने का मामला मानवाधिकार हनन का एक ज्वलंत उदाहरण है. छत्तीसगढ़ में तो आम जनता माओवादियों और सुरक्षाबलों के बीच पिस रही है. सरकार सुरक्षाबलों द्वारा आम आदमी का उत्पीड़न रोक पाने में नाकाम साबित हुई है. जुलाई 2009 में मणिपुर के एक भरे बाज़ार में पुलिस ने एक युवक की हत्या कर दी. एक फोटोग्राफर इस पूरी घटना को अपने कैमरे में कैद कर चुका था. बावजूद इसके राज्य के मुख्यमंत्री ने एक आतंकवादी को मार गिराने के लिए पुलिस की प्रशंसा की. बाद में जब विरोध हुआ तो राज्य सरकार को इस घटना की न्यायिक जांच के आदेश देने पड़े. मणिपुर की शर्मिला इरोम की कहानी भारत में मानवाधिकारों की स्थिति को साफ़ करती है. हालात इतने भयावह हैं कि बड़े तो बड़े बच्चे भी इस पूरे कुचक्र में फंस चुके हैं.

रिपोर्ट के मुताबिक़, माओवादियों ने 12 से 17 साल की उम्र तक के बच्चों को अपने निशाने पर ले लिया है. माओवादी यह स्वीकारते हैं कि वे बच्चों को अपनी टीम में शामिल कर रहे हैं. ग़रीबी और माओवादियों के ख़ौफ़ के चलते बच्चों का भविष्य अंधकारमय हो चुका है. बिहार और झारखंड के कई इलाक़ों में माओवादियों और सुरक्षाबलों के बीच चलने वाले संघर्ष की वजह से बच्चे स्कूल तक नहीं जा पा रहे हैं. दूरदराज के इलाक़ों में माओवादियों ने कई स्कूलों की इमारतें ध्वस्त कर दी हैं. वहीं कई स्कूलों पर सुरक्षाबलों का क़ब्ज़ा है.

- किसके लिए मकोका, अफसपा क़ानून
- हज़ारों निर्दोष लोग सुरक्षाबलों की कार्रवाई अथवा आतंकी हमलों की भेंट चढ़े
- स्कूलों पर पहले माओवादी हमला, फिर पुलिस का क़ब्ज़ा
- माओवादी सेना में 12 से 17 साल तक के बच्चे

कश्मीर में सेना और आम आदमी आमने-सामने. फोटो– पीटीआई

झारखंड के एक गांव में नक्सली हमले में ध्वस्त सरकारी स्कूल.

सेना या पुलिस द्वारा फ़र्ज़ी मुठभेड़ और आतंकियों के विरुद्ध कार्रवाई में आम नागरिकों की मौत के अलावा माओवादियों के हमले झेल रहे लोगों की स्थिति पर ह्यूमन राइट्स वाच की वर्ष 2010 की रिपोर्ट भारत में हो रहे मानवाधिकार हनन की असली कहानी बयां करती है. यह रिपोर्ट 2009 के दौरान की गई जांच–पड़ताल और रिसर्च के आधार पर तैयार की गई है.

फोटो– प्रभात पाण्डेय
विनायक सेन.

नक्सली, पुलिस और जनता

वर्ष 2009 में भारत में माओवादी और अलगाववादी हिंसा की वजह से बड़ी संख्या में अर्द्धसैनिक और पुलिसबलों की तैनाती की गई. सरकारी अधिकारी माओवादियों और अलगाववादियों के ख़िलाफ़ चलाए जाने वाले ऑपरेशन के दौरान किसी भी तरह का

मुठभेड़ और आम आदमी

मणिपुर में पुलिस और जनता में झड़प.

देश के कई भागों में बड़ी संख्या में लोगों की हत्या के लिए आतंकवादी ज़िम्मेदार रहे हैं. वर्ष 2009 के दौरान लगभग 2000 लोग आतंकी हिंसा की भेंट चढ़े. इसमें लगभग 500 निर्दोष आम नागरिक भी शामिल हैं. 2008 में क़रीब 1000 आम नागरिक गोलियों का शिकार बने. सुरक्षाबलों और आतंकियों के बीच होने वाली मुठभेड़ में अक्सर आम आदमी को अपनी जान गंवानी पड़ती है. रिपोर्ट के मुताबिक़, सुरक्षाबलों द्वारा फ़र्ज़ी मुठभेड़ दिखाकर भी लोगों को मार दिया जाता है और कहा जाता है कि वे आतंकियों से मुठभेड़ के दौरान हुई गोलीबारी के शिकार हो गए.

भारत की भूमिका

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग
सर्वे भवन्तु सुखिनः
NATIONAL HUMAN RIGHTS COMMISSION

वर्ष 2009 में संयुक्त राष्ट्र के उच्चायुक्त (मानवाधिकार) नवनीथम पिल्लै ने अपनी भारत यात्रा के दौरान यहां की सरकार को उन नीतियों और क़ानूनों को लागू करने का सुझाव दिया, जो मानवाधिकारों की रक्षा करते हैं. पिल्लै ने अफसपा जैसे क़ानून को ख़त्म करने की वकालत करते हुए कहा कि ऐसे क़ानून मानवाधिकार के अंतरराष्ट्रीय मानकों के ख़िलाफ़ हैं. हालांकि भारत की तरफ़ से अभी भी इन सुझावों पर अमल होना बाक़ी है.

महिलाओं की स्थिति

भारत में महिलाओं के अधिकारों की उपेक्षा हमेशा से होती आ रही है. संयुक्त राष्ट्र के एक अध्ययन के मुताबिक़, दो तिहाई विवाहित महिलाएं घरेलू हिंसा की शिकार हैं. स्वास्थ्य सुविधा प्रणाली के बिगड़ने से हज़ारों भारतीय महिलाएं प्रति वर्ष प्रसव के दौरान दम तोड़ देती हैं. आंकड़ों के मुताबिक़, पूरी दुनिया में प्रसव के वक़्त होने वाली मौतों में से एक चौथाई भारत में होती हैं. भारत में यह दर रूस, चीन और ब्राजील से कई गुना ज़्यादा है.

कैसे-कैसे क़ानून

देश में ऐसे भी क़ानून हैं, जिनका मक़सद सिर्फ़ और सिर्फ़ सुरक्षाबलों के उन जवानों को संरक्षण प्रदान करना है, जिन पर मानवाधिकार हनन का आरोप लगता है. आईपीसी की धारा 197 और अफसपा (आर्म्ड फोर्स स्पेशल पावर एक्ट) जैसे क़ानूनों का यही काम है. इसके अलावा ग़ैर क़ानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम 2008 भी एक ऐसा क़ानून है, जो आतंकवाद की अस्पष्ट परिभाषा को और विस्तृत बनाता है. साथ ही तलाशी और कुर्की को आधिकारिक तौर पर

मणिपुर में भूख हड़ताल पर बैठे लोग.

मान्य बनाता है. इस क़ानून के मुताबिक़, किसी व्यक्ति को बिना किसी आरोप के 180 दिनों तक जेल में रखा जा सकता है, जिसमें 30 दिनों की पुलिस कस्टडी भी शामिल है. पहले यह सीमा 90 दिनों की थी. मकोका जैसा कठोर क़ानून भी इस देश में है, जिसके हिसाब से पुलिस के सामने दिया गया बयान भी साक्ष्य के तौर पर मान्य होता है. जबकि यह सर्वविदित है कि कस्टडी के दौरान किसी व्यक्ति से कुछ भी स्वीकार करवा लेना पुलिस के लिए बाएं हाथ का खेल होता है. गुजरात भी इसी तरह के क़ानून बनाने की राह पर है. हालांकि अभी तक इस पर राष्ट्रपति की मुहर नहीं लग सकी है. भारत सरकार यह दावा करती है कि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग लोगों के अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित करता है. लेकिन ऐसा है नहीं. आयोग प्रायः सरकारी रवैए को ही सही ठहराने की कोशिश करता है. आयोग के पास ऐसे संसाधन भी नहीं हैं, जिनसे वह किसी मामले की स्वयं जांच–पड़ताल कर सके. उसके पास सेना से जुड़े मानवाधिकार हनन के मामलों की जांच का भी अधिकार नहीं है. राज्य मानवाधिकार आयोगों की हालत तो और भी ख़राब है.

shashishekhar@chauthiduniya.com

पर्यटक को गांवों में ले जाना, ग्रामीण परिवार के साथ जोड़ना और फिर उसे ग्रामीण अंचल में पसरी नीरवता का हिस्सा बना देना निस्संदेह एक रोचक अनुभव होता है.

राजस्थान की खिड़की नवलगढ़

सांस्कृतिक, सामाजिक एवं पारंपरिक विरासत की गोद में पसरा लोकजीवन, उसमें समाए लोकानुरंजन के विविध प्रकार, ठेठ ग्रामीण खानपान और खेतों की पगडंडियों की सैर का अनुभव निश्चित ही एक रोमांचक अनुभव होता है. शायद यही वजह है, जिसके चलते ग्रामीण पर्यटन की अवधारणा साकार रूप ले रही है.

उमाशंकर मिश्र

बावड़ियां, जोहड़, छतरियां, किले, मंदिर, सुंदर हवेलियां एवं उनकी कहानियां. हवेलियों की दीवारों पर छिटके रंग. आलों में बिखरे रंग. झरोखों से झांकते रंग. हरा, नीला और पीला रंग. रंगों के समुच्चय के बीच उकेरी गई तस्वीरें. हर तस्वीर का एक अलग अंदाज़. एक अलग संदेश. विशाल दरवाज़ों पर सुंदर नक्काशी और धातुओं की बारीक़ सजावट. संकरी गलियां और उनमें पसरा अपनापन. नवलगढ़ के ग्रामीण क़स्बाई लोकजीवन की यह एक छोटी सी झलक भर है. पूरी तस्वीर की बात करें तो उसके कई आयाम हैं. चौबारे, ऊंघती हवेलियों के प्रवेश द्वार और मनिहारों की दुकानों के बीच से होकर टेढ़ी-मेढ़ी गलियां रेतीली पगडंडियों की ओर निकल जाती हैं. जिन पर चलते हुए दिख जाती हैं पनघट पर ठिठोली करतीं पारंपरिक पोशाक पहने हुए पनिहारिनें एवं सेर भर रंगीले सूत का झीना सा कपड़ा सिर पर लपेटे हुए बूढ़े बरगद की छांव में सुस्ताते लोग, जो टकटकी लगाकर परदेसियों को देखते हैं और परदेसी भी उन लोगों के भोलेपन एवं भाव-भंगिमा को एकटक निहारने लगते हैं. राजस्थान में शेखावटी अंचल में स्थित नवलगढ़ अपने आप में इतिहास की किसी पोथी से कम नहीं है. नवलगढ़ ही नहीं, अपितु पूरे शेखावटी के ग्राम्य जीवन और वहां की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं पारंपरिक विविधता के आधार पर इसे अगर राजस्थान की खिड़की कहा जाए तो ग़लत नहीं होगा.

सात समंदर पार से आए सैलानी इस खिड़की से झांककर गांवों का देश कहे जाने वाले भारत की लोक परंपरा, संस्कृति, लोकजीवन और लोकाचारों को क़रीब से देखना, छूना और महसूस कर लेना चाहते हैं. लक्ष्मणपुरा तहसील के गांव सिंहासन के ठाकुर गिरवर सिंह को भी विदेशी मेहमानों की ख़ातिरदारी का अवसर मिला है. वह बताते हैं कि मेहमानवाजी तो राजपूतों की परंपरा है और हमें अपने अतिथियों का स्वागत-सत्कार करके ख़ुशी होती है. ग्रामीण जीवन की इसी सहजता के आधार पर ग्रामीण पर्यटन की संकल्पना का विकास हुआ है. ठाकुर गिरवर सिंह की पुश्तैनी हवेली में उन्हें पर्यटकों के लिए कोई औपचारिक व्यवस्था नहीं करनी पड़ती और न ही घर की महिलाओं को इसमें असहजता होती है. जो जैसा है, ठीक उसी रूप में मेहमानों को देखने के लिए मिलता है.

रोज सुबह योग और आयुर्वेद की चर्चा एवं अभ्यास, हिंदी भाषा की कक्षाएं, ग्रामीण खेल जैसे हरदड़ा, ठीया लाठी, रूमाल झपट्टा, कबड्डी, आंधो भैंसो, लंगड़ी टांग आदि के रोचक मुक़ाबले, ऊंट-घोड़े की सवारी, ट्रैक्टर पर सैर और ख़ूब सारा पैदल चलना दिनचर्या का अहम हिस्सा होता है. गांव के हुनरमंद परिवारों जैसे मिट्टी के बर्तन बनाने वाले कुम्हार, लकड़ी का काम करने वाले सुथार आदि के घरों पर कुछ घंटों तक उनके हुनर को सीखने की कवायद और शाम को गांव वालों के साथ एक-दूसरे की संस्कृति व देशकाल पर चर्चा इस यात्रा का महत्वपूर्ण अंग होते हैं.

सहज मोरारका टूरिज़्म इंडिया लिमिटेड ने विदेशी सरजमीं पर भारत की सोंधी माटी की महक को बिखेरने का प्रयास किया है. यही कारण है कि पिछले कुछ समय में ही फ्रांस, अमेरिका, स्विट्ज़रलैंड और इंग्लैंड जैसे देशों के पर्यटक ग्रामीण भारत की संस्कृति, सभ्यता एवं संयुक्त परिवार की परंपरा को देखने के लिए खिंचे चले आते हैं. सहज मोरारका के मैनेजर-कोआर्डीनेटर विजयदीप सिंह बताते हैं कि ग्रामीण पर्यटन को लेकर हमारा नज़रिया अन्य व्यवसायिक टूर ऑपरेटर्स से हटकर है. जीवन की सरलता गांवों में है और ग्रामीण नैसर्गिक वातावरण के स्वरूप को यथावत क़ायम रखते हुए पर्यटकों को भारतीय गांवों के यथार्थ स्वरूप का दर्शन कराना हमारा प्रयास है. वह यह भी कहते हैं कि पर्यटक आपके परिवेश को देखना और समझना चाहते हैं, लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि अपने कंफर्ट और लक्ज़री के साथ. इसके लिए नवलगढ़ की हवेलियां, जिन्हें हेरिटेज होटल की शक्ल दी गई है, उनके आतिथ्य के लिए हमेशा तैयार रहती हैं. औसतन क़रीब 50-60 पर्यटक प्रत्येक माह यहां आ रहे हैं.

लेकिन कुछ लोग गांव की आत्मा को देखना और समझना चाहते हैं, इसलिए उन्हें ग्रामीण परिवारों के साथ उनके झोपड़ों में भी ठहरने से कोई गुरेज नहीं होता. ग्रामीण परिवारों के साथ ठहर कर इन पर्यटकों को ग्रामीण जीवन की सहजता और प्रकृतिजन्य माहौल से सीधे रूबरू होने का मौक़ा मिलता है, जो किसी रिसोर्ट में देख पाना संभव नहीं है. शेखावटी के नवलगढ़, कटराथल, सिंहासन, बीदासर, बेरी एवं अजीतपुरा सरीखे गांवों में सहज मोरारका का ग्रामीण पर्यटन का यह प्रयोग सफल रहा है. शेखावटी के अलावा बीकानेर, जोधपुर, जयपुर, कोटा और दौसा के क़रीब 500 परिवारों को इस प्रकार की गतिविधियों से जोड़ा गया है. बकौल विजयदीप सिंह, हमारा प्रयास ग्रामीण समुदायों को पर्यटन का हिस्सा बनाकर उनके आर्थिक एवं शैक्षिक स्तर का विकास करना भी है, लेकिन पर्यटन को ग्रामीण सशक्तीकरण के वैकल्पिक साधन के तौर पर ही यहां प्रोत्साहित किया जाता है. यहां ग्रामीण पर्यटन को तीन भागों में बांटकर देखा जाता है. पहला तो यह कि किसान को आमदनी का एक अतिरिक्त विकल्प मिल जाए. दूसरा, दो संस्कृतियों का परस्पर सीधा संवाद. तीसरा, एक निश्चित क्षेत्र का इन गतिविधियों के माध्यम से विकास करना. यही नहीं, कुल आमदनी का 20 फ़ीसदी हिस्सा सामाजिक कार्यों हेतु संबंधित ग्रामीण समुदाय को लौटा दिया जाता है. सहज मोरारका के निदेशक विज्ञान गड़ोदिया मानते हैं कि ग्रामीण जीवन के परंपरागत व्यवसाय बने रहें और साथ में लोगों को जीवन स्तर बेहतर बनाने का एक माध्यम मिल सके, इस बात को ध्यान में रखकर भू-पर्यटन का स्वरूप तैयार किया गया है.

पर्यटक को गांवों में ले जाना, ग्रामीण परिवार के साथ जोड़ना और फिर उसे ग्रामीण अंचल में पसरी नीरवता का हिस्सा बना देना निस्संदेह एक रोचक अनुभव होता है. जैसे कि सीकर के किसान नेकीराम गोदारा की चार वर्षीय पोती

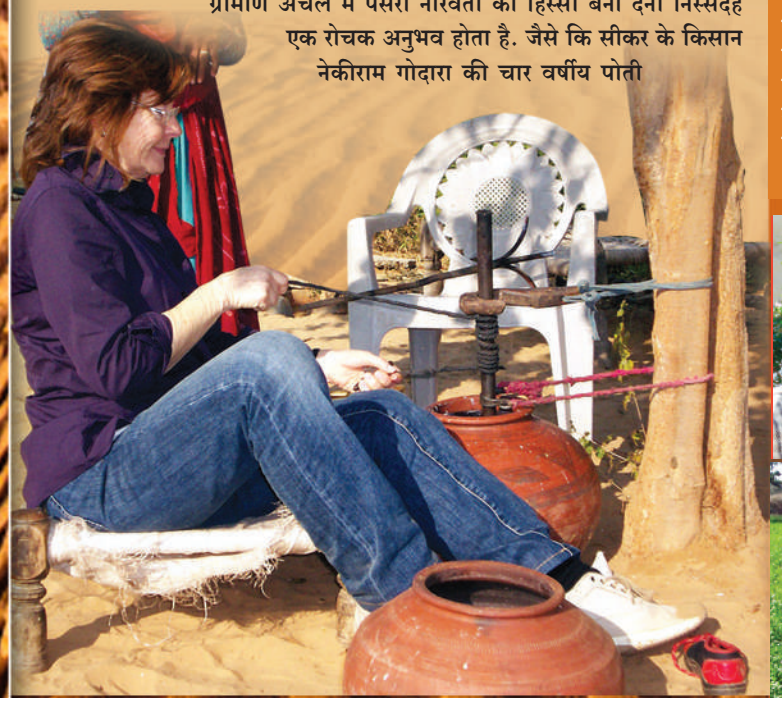

परंपरा और संस्कृति बची रहे

इस काम में ज़िम्मेदारी और स्पष्टता बेहद ज़रूरी चीजें हैं. इनके अभाव में समुदाय के लोग हतोत्साहित हो सकते हैं. पुष्कर को उदाहरण के तौर पर लिया जा सकता है. वहां अनियमितता के चलते लोगों के नैतिक स्वभाव पर भी असर पड़ा है. जज़्बात को व्यक्त करने के अंदाज़ तक बाहरी लोगों के आगमन से बदल जाते हैं. हम इस बात को जानते हैं और हमने ख़ुद को इस दृष्टि से तैयार किया है कि गांवों का वास्तविक स्वरूप क़ायम रखते हुए उन्हें सशक्त बनाया जा सके. इसलिए हम ग्रामीण पर्यटन को जियो टूरिज़्म कहते हैं. पर्यटकों के साथ-साथ आतिथ्यकर्ताओं को भी क्या करें और क्या न करें की सख़्त हिदायत दी जाती है. इसमें ग्रामीणों को तो महज़ साफ़-सफाई के बारे में बताया जाता है. जबकि विदेशी पर्यटकों को भारतीय संस्कृति के मूलभूत तत्वों के बारे में बाक़ायदा समझा कर यह बताया जाता है कि ऐसा कुछ न घटित हो, जो कि हमारी परंपरा और संस्कृति को दूषित करता हो.

-विजयदीप सिंह, मैनेजर कोऑर्डीनेटर, सहज मोरारका टूरिज़्म इंडिया लिमिटेड.

पर्यटन से कमाई भी और नुकसान भी

पर्यटन को एक हद तक हम बदल नहीं सकते. यह इसकी आधारभूत बुराई है. पर्यटन का वर्तमान स्वरूप सुखवादी एवं सतही है. हमारे यहां तो पर्यटन धार्मिक एवं सांस्कृतिक होता है. स्वाभाविक जीवन और वर्तमान बाज़ार आधारित पर्यटन में परस्पर कोई सरोकार नजर नहीं आता. डॉलर ज़रूर मिलते हैं, लेकिन ख़राबियां भी अवश्य आएंगी. एक हद तक इसे नियंत्रित ज़रूर किया जा सकता है. विडंबना यह है कि हमारे पर्यटन तंत्र का नज़रिया सांस्कृतिक नहीं है. इसके बाज़ारू रवैये और साधनविहीनता से भी समस्याएं पैदा हुई हैं. ज़्यादातर पर्यटक मौजमस्ती के मूड में आते हैं और स्थानीय सांस्कृतिक, सामाजिक एवं पारंपरिक सरोकारों से उनका कोई लेना-देना नहीं होता. गाइडों का सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से संबंध न होना भी चिंतनीय है. खुली छूट देने का नतीजा है कि जैसलमेर में एड्स फैल रहा है. मकानों की छतों पर बैठकर बीयर पीना क्या स्थानीय सभ्यता के खांचे में फिट बैठता है? डॉलर एवं यूरो मुफ्त में नहीं आते, इसकी क़ीमत हमें चुकानी पड़ रही है. आज स्वाभाविक वातारण में लक्ज़री का एक द्वीप खड़ा कर दिया गया है. यह एक चेन रिएक्शन है. इन सबके क्रम में लोककला का नाश हो रहा है. लोककला जो ज़िंदगी थी, उसे नाटक बना दिया गया. इन सबको रोकने वाला तंत्र पैदा करना होगा. यह सही है कि ग्रामीण पर्यटन से ग्रामवासियों को ऊपर उठने का अवसर मिलेगा, क्योंकि जब पैसा आता है तो लोग जातियां भूल जाते हैं. लेकिन यह नहीं भूलना चाहिए कि ग़लत तरीक़े का पर्यटन ज़्यादा स्थायी होता है. इससे बचना होगा.

-विजय वर्मा, विशेषज्ञ-लोककला एवं सांस्कृतिक पर्यटन.

पर्यटन से नुकसान भी हुआ है

पर्यटन को संस्कृति से जोड़ने पर उसके दुष्परिणाम देखने को मिलते हैं. कालबेलिया नृत्य को जिस तरह से प्रचारित किया गया है, वास्तव में तो यह नृत्य है ही नहीं. इसी तरह खड़-ताल बजाने वाले लोगों से जबरन नाच भी कराया जाने लगा. यह पर्यटन की देन है, जिससे सांस्कृतिक एवं पारंपरिक बदलाव होने लगते हैं. हमारे यहां पर्यटकों को अतिथि देवो भव: की बात कहकर खुली छूट दे दी जाती है. जैसलमेर फोर्ट आज शहर का सबसे बड़ा सिट हाउस बन चुका है. जन हस्तक्षेप से इस सांस्कृतिक विरासत को नुक़सान पहुंचा है. ओमान में कोई भी पर्यटक होटल के बाहर निकलता है तो यह ज़रूरी होता है कि वह सभ्य एवं पर्याप्त पोशाक पहने हुए हो. लेकिन अपने यहां इस बात की परवाह नहीं की जाती. गोवा में इस बेपरवाही का असर देखा जा चुका है. जोधपुर से पाकिस्तान तक होने वाली कैमल सफारी में फ्रेंच लड़कियां थकान के कारण मसाज की मांग करती थीं. इसी आड़ में साथ रहने वाले गाइडों से असुरक्षित यौन संबंध बन जाने से एचआईवी का प्रसार उस इलाक़े में बढ़ गया है. हम क्या करना चाहते हैं, कहां जाना चाहते हैं? यह स्पष्ट ही नहीं है. दिखाना चाहें तो वे ऑफ लाइफ दिखाएं. सरकार की सख़्त भूमिका इस संदर्भ में होनी चाहिए. पर्यटन इंडस्ट्री पैसा ज़रूर देती है, लेकिन इसके वर्तमान परिदृश्य को देखते हुए कहा जा सकता है कि लम्हों ने ख़ता की थी, सदियों ने सजा पाई.

-आर. सिंह, रंगकर्मी.

पर्यटक परिवार से जुड़ जाते हैं

पर्यटक हमारे परिवार से इस कदर जुड़ जाते हैं कि जाते समय उनकी आंखों से आंसू छलक पड़ते हैं. पारिवारिक सुख के अनुभव से संवेदना के तार झनझना उठते हैं. ऐसे में भौतिक जीवन जीने और जीवनसाथी को कपड़े की तरह बदलने वाले पाश्चात्य पर्यटकों को भारतीय संस्कृति का बोध हो जाता है.

-ठाकुर गिरवर सिंह, सिंहासन गांव, नवलगढ़.

अनायास ही एक महिला पर्यटक को फिड़कली (रंग बिरंगी तितली) कह बैठी. फिर क्या था, ठेठ ग्रामीण अंदाज़ में फिड़कला-फिड़कली हर किसी की जुबां पर चढ़ गया. बीदासर गांव के नेकीराम गोदारा बताते हैं कि यहां पर्यटकों को घास-फूस की झोपड़ियों में ठहराया जाता है. हाल ही में फ्रांस से आए एक युगल को उन्होंने प्यार और मोहब्बत नाम दिया है. वह बताते हैं कि एक पर्यटक को ठहराने की एवज में हमें 500 रुपये मिल जाते हैं. जबकि ख़र्च कुछ नहीं होता, सब कुछ घर से ही मिल जाता है.

खेत-खलिहान, पगडंडियों की सैर के अलावा पर्यटक और ग्रामीण दोनों ही विचारों के स्तर पर लाभांवित हो सकें, इसके लिए उन्नत कृषि तकनीकों, जैविक खेती, केंचुआ खाद, हर्बल स्प्रे आदि पर होने वाली प्रायोगिक कक्षाओं का भी हिस्सा बना जा सकता है. पर्यटकों के लिए खेत से मूली और गाजर उखाड़ कर खाना एक रोमांचकारी अनुभव होता है. महिला पर्यटकों की मेहंदी एवं रसोई में रुचि स्वाभाविक है, इसलिए नियमित रूप से दोपहर के खाने की तैयारियों में उन्हें शामिल किया जाता है. पर्यटक महिलाएं ग्रामीण महिलाओं के साथ मिलकर चूल्हे पर खाना बनाती हैं. खाने का अंदाज़ भी ठेठ ग्रामीण होता है. दरी पर बैठकर पर्यटक सहजता से भोजन ग्रहण करते हैं. ढलती शाम का मनोरंजन ग्रामीण लोक कलाकारों द्वारा होता है तो रात की ख़ामोशी को तोड़ती है कोरस में गाने की होड़. पर्यटक एवं ग्रामीण युवक-युवतियां अपने गीतों को पूरे मन से गाते हैं और नाचते हैं.

विभिन्न प्रकार की गतिविधियां जैसे ग्रामीण खेल, घुड़सवारी, ऊंट की सवारी एवं डेजर्ट सफारी आदि पर्यटकों की यात्रा को रोचक बना देती हैं. अन्य आकर्षणों में शामिल है हेरिटेज ऑन व्हील्स. यह एक लक्ज़री टूरिस्ट ट्रेन है, जो शेखावटी को क़रीब से देखने का अवसर प्रदान करती है. इसके अलावा स्थानीय मेले, तीज त्योहार जैसे गणगौर, दशहरा, तीज एवं होली आदि यात्रा के आनंद को कई गुना बढ़ा देते हैं. यही नहीं, आसपास क़रीब 60 से 70 किलोमीटर की दूरी में अन्य कई स्थान हैं, जो पर्यटकों को लुभाते हैं. इनमें अरावली वैली, शाकंबरी देवी, लोहार्गल, जीर्णमाता, हर्षनाथ, मंशा माता, सालासर, राणी सती, खाटू श्याम और नाथ संप्रदाय के आश्रम जैसे धार्मिक स्थान शामिल हैं. शेखावटी शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी माना जाता है. पिलानी, लक्ष्मणगढ़ और नवलगढ़ ने शैक्षिक परिदृश्य को संवारने का काम किया है. राजस्थान के सबसे पहले महाविद्यालय पोद्दार कॉलेज की स्थापना यहां 1921 में हुई थी. स्वयं गांधी जी इस कॉलेज के ट्रस्टी थे. नवलगढ़ में सीबीएसई से मान्यता प्राप्त स्कूल के अलावा पॉलीटेक्निक एवं इंडलोड इंजीनियरिंग कॉलेज भी है.

शेखावटी के राजपूत किलों एवं हवेलियों में बनी सुंदर फ्रेस्को पेंटिंग्स दुनिया भर में प्रसिद्ध हैं. इसी के चलते शेखावटी अंचल को राजस्थान के ओपन आर्ट गैलरी की संज्ञा दी जाती है. 1830 से 1930 के दौरान व्यापारियों ने अपनी सफलता और समृद्धि को प्रमाणित करने के उद्देश्य से सुंदर एवं आकर्षक चित्रों से युक्त हवेलियों का निर्माण कराया. इनमें भगतों की हवेली, छोटी हवेली, परशुरामपुरिया हवेली, छाउछरिया हवेली, सेकसरिया, मोरारका की हवेली एवं पोद्दार हवेली आदि प्रमुख हैं. हवेलियों

के रंग शानों-शौकत के प्रतीक बने. समय गुजरा तो परंपरा बन गए और अब तो विरासत का रूप धारण कर चुके हैं. कलाकारों की कल्पना जितना उड़ान भर सकती थी, वह सब इन हवेलियों की दीवारों पर आज देखने को मिल जाता है. रामायण-महाभारत की पौराणिक गाथाओं से लेकर रेल के इंजन तक. शेखावटी अंचल में राजपूत शेखावत राजाओं द्वारा बनवाए गए क़रीब 50 किले हैं. इनमें मंडावा, डुंडलोड, मुकुंदगढ़, दांता और महाणसर प्रमुख हैं. नवलगढ़ का किला, रूप निवास पैलेस, शीशमहल, पोद्दार कॉलेज टावर, लक्ष्मी नृसिंह मंदिर और गोपीनाथ जी मंदिर अन्य दर्शनीय आकर्षण हैं.

क़स्बानुमा नवलगढ़ शहर सीकर एवं झुंझनू ज़िला मुख्यालय से लगभग समान दूरी पर स्थित है. यह झुंझनू से क़रीब 39 किलोमीटर दूर है, जबकि सीकर से मात्र 30 किलोमीटर. जयपुर, दिल्ली, अजमेर, कोटा और बीकानेर से यह सड़क मार्ग से सीधे जुड़ा हुआ है. जयपुर यहां से क़रीब 160 किलोमीटर है, जबकि राजधानी दिल्ली क़रीब 225 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है. जयपुर-लोहारू मार्ग पर स्थित नवलगढ़ मीटर गेज रेल लाइन से जुड़ा हुआ है. शीघ्र ही इस लाइन के ब्रॉडगेज किए जाने की बात कही जा रही है. पर्यटक सर्दियों के मौसम को यहां आने के लिए चुन सकते हैं. सितंबर से मार्च तक का समय यहां आने के लिए अनुकूल माना जाता है. कालांतर में सिल्क रूट शेखावटी से होकर गुजरता था. इसी कारण ऊंची मीनारों वाले कुंए बनवाए गए, जिससे व्यापारियों का काफ़िला दूर से ही पानी का अंदाज़ लगा सके. गऊघाट, गौशालाएं एवं धर्मशालाएं काफ़ी संख्या में बनवाई गईं. नवलगढ़ में ठहरने के लिए शानदार होटल एवं गेस्ट हाऊस उपलब्ध हैं. इनमें रूपनिवास पैलेस, होटल अपणी ढाणी, होटल सिटी पैलेस आदि प्रमुख हैं.

feedback@chauthiduniya.com

ऐसा मुद्दा, जिससे देश की एकता एवं अखंडता प्रभावित होती है और जो हमारे समाज के संघीय ढांचे को कमज़ोर करता है, उस पर नियंत्रण और सावधानी ज़रूरी है.

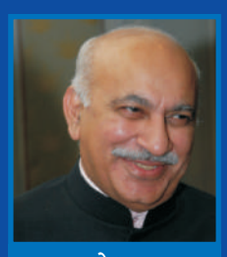

एम जे अकबर

भारतीय कंपनियां भी बेहतर सामरिक साज़ोसामान बना सकती हैं

सैद्धांतिक तौर पर गणतंत्र दिवस परेड हमारी सैन्य शक्ति के प्रदर्शन का एक अवसर है, लेकिन व्यवहारिक तौर पर ऐसा लगता है, जैसे हमारी सैन्य कमज़ोरियां ज़ाहिर हो रही हैं. अगर सिर्फ़ कमज़ोर प्रदर्शन का सवाल है तो कोई बात नहीं है. असल समस्या हमारी सैन्य क्षमता में हो रहे ह्रास की है, जो सालों से राजनीतिक मतभेद, नौकरशाहों के अहं और सैन्य निराशा से उपजा है.

रक्षा निश्चित तौर पर एक द्विअर्थी शब्द है. इसका दूसरा पहलू आक्रमण महज़ पूरक के रूप में है. यह ज़रूरी नहीं है कि रक्षा कर पाने की शक्ति क़ायम रखने के लिए सेना को आक्रामक होना चाहिए. एक प्रतिरक्षात्मक सेना शांतिकाल के वक़्त हमेशा मनोवैज्ञानिक रूप से और युद्ध के वक़्त शारीरिक रूप से पीछे रहती है. इसे समझने के लिए ज़्यादा दिमाग़ लगाने की ज़रूरत नहीं है. कुछ साल पहले एक चीनी जनरल ने खुलेआम दुनिया के सामने यह कहा था कि उनके देश के पास कैलीफोर्निया तक नाभिकीय मिसाइल भेजने की क्षमता है. ऐसे उत्तेजक बयान के बाद भी न तो चीन-अमेरिका संबंध ख़त्म हुआ और न ही वाशिंगटन में चीनी राजदूत को सफाई देने के लिए सम्मन जारी किया गया. बीजिंग में भी उस जनरल का कुछ नहीं हुआ. दरअसल, अपने दोस्तों को भी अपनी ताक़त का अहसास कराते रहना उपयोगी साबित होता है और अपने पक्के दुश्मनों को तो अपनी ताक़त का अहसास कराना बहुत ही ज़रूरी है.

दुविधा तो इस बात की है कि शांतिकाल का सिद्धांत

आज आतंकवाद के चलते मानो ख़त्म हो चला है. रक्षा सेवाओं एवं पुलिस बल के लिए अस्थिर हिंसा और आतंकवाद एक बड़ी चुनौती है. अगर आतंकवादियों को यह पता लग गया कि एक देश की सेना अपनी क्षमता खो चुकी है या खो रही है तो इससे घुसपैठ और हमलों के बढ़ जाने की आशंका तेज हो जाती है. सीमा की चौकसी के लिए नाइट विजन यंत्रों का होना आवश्यक है. हमारे पास तीन हज़ार टैंक हैं, जिनसे हम पश्चिमी सीमा की हिफाज़त कर सकते हैं. लेकिन समस्या यह है कि इनमें से 75 फ़ीसदी टैकों का इस्तेमाल सिर्फ़ दिन में ही किया जा सकता है. जबकि पाकिस्तान आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध में अमेरिका का सहयोगी बन उससे अति आधुनिक यंत्र हासिल कर चुका है. हमारे इंफैंट्री जवानों की लाइट मशीनगन में रात को देख सकने की क्षमता सिर्फ़ दो घंटे की है, क्योंकि इतने समय के बाद बैट्री सूख जाती है. सब जानते हैं कि क्या करना है. लेकिन इसे कैसे इसे हासिल करना है, किसी को नहीं मालूम. सरकार चाहती है कि सेना एक सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी से भारत निर्मित यंत्र ख़रीदे. यह कंपनी एक भी ऐसे विदेशी आपूर्तिकर्ता को तलाश नहीं पाई है, जो तकनीक भी देने को तैयार हो. ज़ाहिर है, विदेशी कंपनियां ऐसा करना नहीं चाहती हैं, क्योंकि इससे उनके व्यापार पर भी असर पड़ेगा. और, अगर इन कंपनियों को साझेदारी में काम करना होगा तो ये किसी निजी कंपनी के साथ काम करना पसंद करेंगी. निजी क्षेत्र की भारतीय कंपनियां आयुध निर्माण नहीं कर सकती हैं.

हालांकि ऐसा क्यों है, यह समझ से बाहर है. आधिकारिक तौर पर यह कहा जाता है कि रक्षा एक संवेदनशील मुद्दा है. मतलब साफ़ है कि भारत की सरकार का भारतीय व्यापारियों पर विश्वास नहीं है, लेकिन यही भारत सरकार रूसी, यूरोपियन, इज़रायली और यहां तक कि अमेरिकी कंपनियों से हथियार लेने के मामले में अधीरता दिखा रही है. आख़िर ऐसा क्यों है, इसे समझना होगा. असल में रक्षा मामलों में मांग-आपूर्ति का एक गहरा संबंध है. अंतरराष्ट्रीय हथियार उद्योग बेशक़ गुणवत्तायुक्त सामान की आपूर्ति करता है, लेकिन इसकी क़ीमत काफ़ी ज़्यादा होती है. भारत का राजनीतिक और नौकरशाही वर्ग घरेलू आपूर्तिकर्ताओं के मुक़ाबले अंतरराष्ट्रीय लॉबी की बात सुनना ज़्यादा पसंद करता है, क्योंकि इसमें उसे कमीशन मिलने की गुंजाइश ज़्यादा रहती है और यह सुरक्षित भी ज़्यादा होता है. 1947 में भारत के पास रक्षा उत्पादन की जो क्षमता थी, वह ब्रिटेन से मिली थी, जो निश्चित तौर पर उस वक़्त चीन के मुक़ाबले काफ़ी अच्छी थी. हालांकि पिछले छह दशकों में चीन ने जो प्रगति की है, उसके मुक़ाबले हम इछापुर राइफल भी नहीं बना सकते. जहां भी ज़रूरी हुआ, चीन ने उच्चतम क्वालिटी के उत्पाद बनाने के लिए विदेशी तकनीक अपनाई. यहां तक कि युद्धक विमान बनाने में भी. यहां अंतर सिर्फ़ मानवीय योग्यता का ही नहीं है, बल्कि उस शब्द का भी है, जो नेहरू के जमाने में तो हॉलमार्क माना जाता था, लेकिन पिछले दो दशकों में ख़त्म हो चुका है. वह शब्द है आत्मनिर्भरता. नेहरू के जमाने में रक्षा मामलों में आत्मनिर्भरता का अर्थ क्या था, इसका अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि तब के रक्षा मंत्री वी कृष्णा मेनन सोचते थे कि देश की रक्षा तो राजनीति ही कर सकती है.

हमारी अर्थव्यवस्था मिश्रित थी, लेकिन हम इसमें रक्षा उत्पादन की अर्थव्यवस्था को नहीं मिला सके. यदि भारतीय उद्योगपतियों को रक्षा उत्पादन में आने की इजाज़त दी गई होती तो वही लोग आज पूरी दुनिया को हथियारों की आपूर्ति कर रहे होते और हमारे देश को बेहतर बना देते. चीन ने न सिर्फ़ आत्मनिर्भरता में विश्वास किया, बल्कि वह उस दिशा में आगे भी बढ़ा. हमने आसान रास्ता चुना, ख़ुशामद की और ऐसे रास्ते पर आ गए, जहां सब कुछ ख़त्म हो जाता है. हमारे पास ख़ुद को सांत्वना देने के लिए बस इतना है कि पाकिस्तान हमसे कहीं बुरी स्थिति में है. शायद यही वजह है कि दिल्ली एवं इस्लामाबाद में तो शांति वार्ताएं चलती रहती हैं और उधर आतंकवादी दोनों देशों में अपने विकल्प एवं अवसर तलाश रहे होते हैं.

feedback@chauthiduniya.com

सर्वोच्च न्यायालय का विभाजन : एक ख़तरनाक खेल

रवि किशोर

क़ानून मंत्रालय द्वारा भारत के सर्वोच्च न्यायालय को संवैधानिक खंड और अपीलीय खंड में बांटने के मुद्दे का बारीक़ी से परीक्षण किए जाने की ख़बर है. यह विधि आयोग की अनुशंसाओं पर आधारित है. विधि आयोग ने सर्वोच्च न्यायालय को विभाजित करने और संविधान संबंधी मामलों एवं इससे जुड़े दूसरे मसलों को देखने के लिए दिल्ली में एक संवैधानिक पीठ और चार अलग-अलग जगहों पर अभिशून्य पीठ स्थापित करने की अनुशंसा की है. इसके अलावा देश के अलग-अलग क्षेत्रों में स्थापित होने वाली पीठ उत्तर क्षेत्र- दिल्ली में, दक्षिण क्षेत्र-चेन्नई या हैदराबाद में, पूर्व क्षेत्र- कोलकाता में और पश्चिमी क्षेत्र-मुंबई में उन अपीलीय मामलों को देखेंगी, जो उस ख़ास क्षेत्र के उच्च न्यायालयों के निर्णय या आदेशों के बाद दायर किए जाएंगे.

विधि आयोग ने अपनी अनुशंसा में कहा है कि उसकी अनुशंसा को लागू कर पाने में अगर संविधान का अनुच्छेद 130 कोई रुकावट बनता है तो संसद को इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए संवैधानिक संशोधन की दिशा में समुचित पहल करनी चाहिए. उच्चतर न्यायालयों में लंबित मामलों में कमी लाने और इन अदालतों में न्यायाधीश नियुक्त करने के लिए सही व्यक्ति तलाश पाने में होने वाली परेशानी को देखते हुए सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की उम्र सीमा बढ़ाकर 70 वर्ष एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की उम्र सीमा 65 वर्ष करने की अनुशंसा की गई है. बहरहाल, सर्वोच्च न्यायालय को बांटने का मसला आसान नहीं है, क्योंकि विधि आयोग इसे सामने लाया है और उसी ने इसकी अनुशंसा की है. सर्वोच्च न्यायालय न केवल लोकतंत्र का एक प्रमुख स्तंभ है, बल्कि आज के अस्थिर माहौल में यह लोकतंत्र और देश का साथ क़ायम रखने में अहम भूमिका निभा रहा है. सर्वोच्च न्यायालय न केवल अपील की अंतिम अदालत है, बल्कि संवैधानिक मामलों और संघ एवं राज्य के बीच तथा अंतरराज्यीय विवादों को निपटाने वाला पंच भी है. संघवाद के मामले और देश की संप्रभुता अक्षुण्ण रखने में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका कितनी महत्वपूर्ण है, दुर्भाग्यवश विधि आयोग इसके अंदर गया ही नहीं. विधि आयोग ने सर्वोच्च न्यायालय के विभाजन को ऐसे उपकरण के रूप में देखा, जिससे वहां लंबित मामलों में कमी लाई जा सकती है. लेकिन केवल सर्वोच्च न्यायालय ही क्यों? उच्च न्यायालयों और अन्य अधीनस्थ न्यायालयों में मामले ज़्यादा लंबित हैं. अधीनस्थ न्यायालयों में मामले लंबित रहने से ग़रीब लोगों को ज़्यादा ख़ामियाज़ा भुगतना पड़ता है और सर्वोच्च न्यायालय का बंटवारा न्यायिक व्यवस्था में होने वाली देरी का निदान नहीं है विधि आयोग ने अपनी अनुशंसा में इस मसले को स्वयं ही उठाने का उल्लेख किया है. व्यापक परिणाम वाले मसलों पर अलग-अलग स्तर पर बहस बेहद ज़रूरी है. इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि कोई भी संस्था जो अनुशंसा करती है, जैसे विधि आयोग ने जो अनुशंसा की है, इस बात की काफ़ी आशंका रहती है कि क्षेत्रवाद और प्रांतवाद की तरफ़दारी करने वाली शक्तियां व्यक्तिगत लाभ के लिए उसका दोहन करें. मुंबई और महाराष्ट्र में हम यह देख चुके हैं.

ऐसा मुद्दा, जिससे देश की एकता एवं अखंडता प्रभावित होती है और जो हमारे समाज के संघीय ढांचे को कमज़ोर करता है, उस पर नियंत्रण और सावधानी ज़रूरी है. भारतीय संघवाद और लोकतंत्र के लिए केंद्र का मज़बूत होना ज़रूरी है. मज़बूत केंद्र ही देश के अंदर और बाहर सक्रिय अलगाववादी शक्तियों, जो देश को टुकड़ों में बंटा देखना चाहती हैं, का मुक़ाबला करने में सक्षम हो सकता है. सर्वोच्च न्यायालय देश की राजधानी दिल्ली में स्थित है. यह भारतीय संघवाद की ताक़त और मज़बूत केंद्र का परिचायक है. प्रत्येक व्यक्ति इसे अंतिम विधिक प्राधिकार के तौर पर देखता और पहचानता है. इसके काम करने से भारतीय संघ को भरपूर शक्ति मिलती है. सर्वोच्च न्यायालय मज़बूत केंद्र को प्रतिबिंबित करता है और भारतीय संघवाद में केंद्रीय महत्व रखता है. और, अगर सर्वोच्च न्यायालय को बांटा जाता है तो यह भारतीय संविधान की बुनियाद पर हमला करने जैसा होगा.

बहरहाल, संविधान में दिल्ली के अलावा दूसरी जगहों पर भी सर्वोच्च न्यायालय की पीठ या पीठें स्थापित करने का प्रावधान है. संविधान के अनुच्छेद 130 में यह प्रावधान है कि उच्चतम न्यायालय दिल्ली अथवा ऐसे अन्य स्थान या स्थानों में अधिविष्ठ होगा, जिन्हें भारत के मुख्य न्यायाधीश, राष्ट्रपति के अनुमोदन से समय-समय पर नियत करें.

भारत संघ बनाम एस पी आनंद मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया था कि भारतीय संविधान का अनुच्छेद 130 एक ऐसा प्रावधान है, जो भारत के मुख्य न्यायाधीश को राष्ट्रपति के अनुमोदन से दिल्ली के अलावा दूसरी जगह या जगहों पर सर्वोच्च न्यायालय की पीठ स्थापित करने की शक्ति प्रदान करता है. अनुच्छेद 130 को भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा सर्वोच्च न्यायालय दिल्ली के अलावा दूसरे स्थान या स्थानों पर अधिविष्ठ करने की अनिवार्य ज़िम्मेदारी के तौर पर नहीं देखा जाना चाहिए. कोई भी अदालत भारत के मुख्य न्यायाधीश या राष्ट्रपति को अनुच्छेद 130 की शक्तियों को इस्तेमाल करने का निर्देश नहीं दे सकती. विधि आयोग जिस बात को समझ पाने में नाकामयाब रहा, वह यह है कि संविधान का अनुच्छेद 130 केवल इस बारे में है कि सर्वोच्च न्यायालय को दिल्ली के अलावा किसी भी जगह अधिविष्ठ किया जा सकता है. सर्वोच्च न्यायालय को विभाजित करने की बात संविधान के किसी भी अनुच्छेद में नहीं कही गई है. अगर ऐसी बातें होतीं तो संविधान निर्माताओं के स्वर बिल्कुल ही अलग होते. कहने की ज़रूरत नहीं कि अनुच्छेद 130 में बस एक ही प्रावधान का उल्लेख है. सर्वोच्च न्यायालय के बंटवारे की अपनी व्यवहारिक कठिनाइयां हैं. मसलन अगर अलग-अलग पीठ किसी मामले में विरोधाभासी निर्णय देती हैं या राय रखती हैं तो ऐसी परिस्थिति में क्या होगा?

विधि आयोग ने एक अलग संवैधानिक पीठ स्थापित करने की अनुशंसा की है. आयोग के मुताबिक़, संवैधानिक पीठ विशेष तौर पर संवैधानिक और लोकहित याचिका से जुड़े मामलों को ही देखेगी. यह मसला किसी भी तरह भारतीय संघ को कमज़ोर न करे, देश के विधि मामलों के विशेषज्ञों एवं सांसदों को इस पर ग़ौर फरमाना होगा. उन्हें यह देखना होगा कि विधि आयोग ने जो अनुशंसाएं की हैं, उनमें से कौन देश के लिए सही रहेंगी. उन्हें इस बात का फ़ैसला करना होगा. कुछ देशों में ऐसी अदालतें काम कर रही हैं और वहां का क्या अनुभव है, इस पर ग़ौर करना होगा.

यहां तक कि भारत के महान्यायवादी (अटार्नी जनरल) जी ई वाहनवति ने सर्वोच्च न्यायालय को विभाजित करने की कोशिशों की आलोचना की थी. अब भारत के मुख्य न्यायाधीश के जी बालाकृष्णन ने भी सर्वोच्च न्यायालय को बांटने के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलंद की है और चेतावनी दी है कि इससे सर्वोच्च न्यायालय के प्रभाव में कमी आएगी. भारत के मुख्य न्यायाधीश के मुताबिक़, मैं सर्वोच्च न्यायालय को बांटने के पक्ष में नहीं हूं. व्यक्तिगत तौर पर मुझे लगता है कि सर्वोच्च न्यायालय देश के किसी दूसरे हिस्से में नहीं होना चाहिए. यह देश की सर्वोच्च अदालत है और इसे देश की राजधानी में ही होना चाहिए. यह उम्मीद की जानी चाहिए कि सरकार विधि आयोग की अनुशंसा को जब तक पूरी तरह से परख नहीं लेगी, तब तक उस पर कोई निर्णय नहीं लेगी.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback@chauthiduniya.com

आरक्षण एक छलावा

चौथी दुनिया में मुस्लिम आरक्षण का भविष्य शीर्षक से आरक्षण के बारे में कुछ विचार पढ़ने को मिले. वास्तव में आरक्षण एक छलावा है, क्योंकि वह आज सियासत की शतरंज का एक मोहरा बन गया है. देश को आजाद हुए साठ साल हो गए. अगर आरक्षण से कोई फायदा होने वाला होता तो अब तक जिन्हें आरक्षण मिला, वे ख़ुशहाल हो गए होते. लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ और आगे भी नहीं होगा. आरक्षण देश को बांट रहा है. आरक्षण देना है तो आर्थिक रूप से कमजोर लोगों को दिया जाए, चाहे वे किसी भी जाति-वर्ग के हों. अगर देश का भला करना है तो आरक्षण को बिल्कुल खत्म कर देना चाहिए अथवा फिर उसका रूप बदल दिया जाए.

अमित कुमार शर्मा, *गुड़गांव, हरियाणा.*

शिक्षा की बदहाली

4-11 जनवरी के अंक में बिहार में शिक्षक बहाली प्रक्रिया में हुए भ्रष्टाचार के बारे में जो रिपोर्ट आपने छापी है, वह अक्षरश: सच है. यहां शिक्षा भ्रष्टाचार के दलदल में डूबती जा रही है. जिन्हें खुद ठीक से पढ़ना-लिखना नहीं आता, वे शिक्षक हो गए हैं. निजी स्कूलों से अनुभव प्रमाणपत्र खरीद कर सरकारी शिक्षक बनने वालों की संख्या यहां ज्यादा है. यह काम पंचायतों से शुरू होकर मंडल स्तर तक होता रहा है. सरकार सब कुछ जानती है. इस स्थिति के लिए वह खुद दोषी है, क्योंकि उसी ने नारा दिया कि सर्टिफिकेट दिखाओ, नौकरी पाओ. आधे से ज्यादा शिक्षक अध्यापन कार्य के लायक़ नहीं है. आज तक कोई भी जांच ढंग से नहीं हुई. अगर होती तो सच्चाई का खुलासा हो जाता. इसी तरह 18 जनवरी के अंक में शशिशेखर का लेख-प्रधानमंत्री जी, देश की जनता भूखी है, भारत की सही तस्वीर पेश करता है.

शंकर शर्मा, *चिलमिल, बेगूसराय, बिहार.*

नरेगा और भ्रष्टाचार

25-31 जनवरी के अंक में प्रकाशित रिपोर्ट-योजना में भारी भ्रष्टाचार पढ़ने के बाद यही कहा जा सकता है कि भले ही इस योजना की बदौलत कांग्रेस दोबारा सत्तासीन हुई हो, लेकिन संबंधित मंत्रालय के मंत्री द्वारा बरती जा रही लापरवाही, राज्य सरकारों की अनदेखी और अधिकारियों-ठेकेदारों की लूटखसोट ने नरेगा को भ्रष्टाचार योजना बना दिया है. अगर समय रहते ध्यान न दिया गया तो इससे उपजने वाला जनाक्रोश कांग्रेस के लिए महंगा साबित हो सकता है.

प्रभात कुमार, *रमेशनगर, नई दिल्ली.*

गांव-समाज को प्रतिनिधित्व

18-24 जनवरी का अंक मिला. अच्छा लगा. चौथी दुनिया को मैं तबसे पढ़ रहा हूं, जब यह बीस रुपये में मिलता था. आज यह पाठकों की पसंद बनता जा रहा है. अपेक्षा यह है कि इसमें गांव-समाज की समस्याओं पर आधारित सामग्री अवश्य दी जानी चाहिए.

अब्दुल कादिर, *ताजपुर-समस्तीपुर, बिहार.*

आपने नब्ज़ पहचानी

चौथी दुनिया ने एक अच्छे अख़बार की कमी पूरी कर दी है. ख़ासतौर पर राजनीतिक लेखों में आप जिस तरह से विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं, वह गौर के क़ाबिल है. आप स्वास्थ्य, शिक्षा, रोज़गार, पर्यटन और ज्ञान-विज्ञान की ख़बरें भी प्रकाशित करें. बिहार परिशिष्ट में संक्षिप्त खबरों को भी स्थान दें तो बेहतर होगा.

चैतन्य चौहान, *अलकापुरी-पटना, बिहार.*

निर्भीक पत्रकारिता

बिना किसी लाग-लपेट के सीधी स्पष्ट बातें कहने की कला तो कोई आपके अख़बार से सीखे. आप निर्भीक पत्रकारिता के पर्याय हैं. मेरा एक अनुरोध है कि अखबार में पन्ने और ज़्यादा होने चाहिए. राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और जम्मू-कश्मीर आदि की खबरें हमें पढ़ने को नहीं मिलती हैं. उम्मीद है, आप इस ओर ध्यान देंगे.

विवेक, *कैथल, हरियाणा.*

आमजन की परेशानियां

चौथी दुनिया निर्भीकता से भरपूर अख़बार लगा. उम्मीद है कि आप कभी किसी राजनीतिक दल के दबाव में नहीं आएंगे और आम लोगों की परेशानियां ज़रूर प्रकाशित करेंगे. ताकि, आज हमारे देश की जो दुर्दशा हो रही है, उसकी अनदेखी की जा रही है, वह न हो सके.

-हिमांशु चौधरी, *गोरखपुर, उत्तर प्रदेश.*

महिलाओं पर सामग्री

आप अपने समाचारपत्र में लगभग सभी कुछ तो छाप रहे हैं, लेकिन महिलाओं के लिए इसमें कुछ विशेष नहीं दिखता. हम भी इस समाचारपत्र के पाठक हैं. हमारी ज़रूरतों के मुताबिक़ भी सामग्री प्रकाशित की जानी चाहिए. उम्मीद है कि हमारी सलाह आपको सही लगेगी.

कुलविंदर कौर, *सेक्टर-14, चंडीगढ़.*

उत्तर पूर्व में भी अख़बार पहुंचे

मैं आपके अख़बार का नियमित पाठक हूं. आपका अख़बार उत्तर पूर्व के लोगों के मन में जगह बना चुका है. हमें इसके हर अंक का बेसब्री से इंतज़ार रहता है. मगर अख़बार स्टॉल्स पर उपलब्ध नहीं रहता है. उम्मीद करता हूं कि आप इधर भी अख़बार की संख्या बढ़ाएंगे और उत्तर पूर्व के मसलों पर भी कवर करेंगे, ताकि इधर की समस्याएं भी उजागर हो सकें.

मिहजात कोन्याक, *कोहिमा*

पाठक अपने विचार और सुझाव हमें इस पते पर भेज सकते हैं-
संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर - 11
नोएडा (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

राहुल, उद्धव और राज

अब झगड़ा राहुल गांधी और उद्धव ठाकरे तथा राज ठाकरे के बीच पहुंच गया है. दोनों की सरपरस्ती करते बाल ठाकरे दिखाई दे रहे हैं. राज ठाकरे और उद्धव ठाकरे के लिए सारा हिंदुस्तान मुंबई या महाराष्ट्र है और उन्हें इस बात की कोई चिंता नहीं है कि देश के बाक़ी हिस्सों के लोग क्या सोच रहे हैं. भारतीय राजनीति में आने की इच्छा रखने वाले राज और उद्धव ठाकरे भारतीय संस्कृति, भारतीय रहन–सहन, भारतीय सहिष्णुता, भारतीय प्यार, भारतीय सह अस्तित्व को न जानना चाहते हैं और न समझना चाहते हैं. उनके लिए साथ रहना और साथ काम करना कोई मायने नहीं रखता. देश की अवधारणा इनके लिए कोई मायने नहीं रखती.

अभद्र भाषा सीखने के लिए किसी स्कूल में जाने की ज़रूरत अब नहीं पड़ने वाली. महाराष्ट्र के दो नेताओं के आए दिन आने वाले बयान इस शिक्षा के लिए काफ़ी हैं. मराठी साहित्यकार पुला देशपांडे और विजय तेंदुलकर की आत्मा अपने इन सपूतों की भाषा सुनकर कराह रही होगी. सवाल उठता है कि क्या महाराष्ट्र के लोगों की पहचान के प्रतीक राज ठाकरे और उद्धव ठाकरे बन रहे हैं? उत्तर है नहीं, बिलकुल नहीं. महाराष्ट्र के लोगों ने अभी कुछ महीने पहले ही साबित किया है कि वे उद्धव ठाकरे और राज ठाकरे के साथ नहीं हैं. उन्होंने चुनाव में कांग्रेस और एनसीपी की सरकार बनवाई है तथा बाल ठाकरे के सपने को धूल में मिला दिया है. आप अगले चार साल तक बाल ठाकरे को दाढ़ी में ही देखेंगे, क्योंकि लोग नहीं चाहते कि वह क्लीन शेव दिखाई दें. बाल ठाकरे ने कसम खाई थी कि वह अपनी दाढ़ी तभी बनवाएंगे, जब शिवसेना की सरकार महाराष्ट्र में बनेगी. सालों हो गए. पहले उन्होंने फ्रेंच दाढ़ी रखी, अब पूरी रखनी पड़ रही है. जनता से मिली हार से कोई सबक शिवसेना ने नहीं सीखा, न ही सीखना चाहती है.

भारतीय जनता पार्टी ने सबक सीखा है, ऐसा दिखाई दे रहा है. भाजपा को लगा कि अगर उसने अलग से चुनाव लड़ा होता तो महाराष्ट्र में उसे अच्छे नतीजे मिल सकते थे. इसलिए पहला मौक़ा मिलते ही उसने शिवसेना से अपने को अलग दिखाना शुरू कर दिया. महाराष्ट्र में उत्तर भारतीयों की सुरक्षा के लिए संघ प्रमुख ने स्वयंसेवकों को आदेश दिए हैं. उत्तर भारतीयों में हिंदू और मुसलमान दोनों शामिल हैं. शिवसेना ने संघ और भाजपा दोनों को धमकाया है. संघ से उसने कहा कि वह दक्षिण में हिंदी का प्रचार करे और भाजपा से कहा है कि सभी काम क़ानून से नहीं होते. यह बयान शिवसेना के एक सांसद ने दिया है, जो संयोग से सामना का संपादक भी है. भाजपा ने महाराष्ट्र की क़ीमत पर देश को खोने की आशंका ख़त्म कर दी है.

राहुल गांधी पांच फरवरी को मुंबई गए. उनके विरोध के लिए अलग–अलग राज ठाकरे और उद्धव ठाकरे ने योजनाएं बनाई थीं. राहुल गांधी को दिल्ली में सलाह दी गई कि वह मुंबई न जाएं, पर राहुल नहीं माने. उन्होंने एक दिन पहले ही युवक कांग्रेस का अध्यक्ष महाराष्ट्र के नौजवान को बना दिया. राहुल गांधी के विरोध में न कहीं लोग थे और न भीड़. बस प्रतीक विरोध था. महाराष्ट्र की जनता ने तो साथ नहीं ही दिया.

संभवतः शिवसैनिकों और नवनिर्माण सैनिकों ने भी नहीं दिया. अकेले टैक्सी ड्राइवरों को पीटना और उनकी टैक्सियां तोड़ना तथा खोमचे वालों को लूटना एक बात है, पर सड़कों पर खड़े मराठा लोगों से भिड़ना दूसरी बात. हमें अच्छी तरह पता है कि दोनों सेनाएं और उनके नेता इससे भी कोई सीख नहीं लेने वाले. अभी महाराष्ट्र में और विशेषकर मुंबई, नासिक और पुणे में अव्यवस्था फैलने वाली है. इसका सामना करने का साहस महाराष्ट्र सरकार को दिखाना चाहिए.

अभद्र भाषा सीखने के लिए किसी स्कूल में जाने की ज़रूरत अब नहीं पड़ने वाली. महाराष्ट्र के दो नेताओं के आए दिन आने वाले बयान इस शिक्षा के लिए काफ़ी हैं. मराठी साहित्यकार पुला देशपांडे और विजय तेंदुलकर की आत्मा अपने इन सपूतों की भाषा सुनकर कराह रही होगी. सवाल उठता है कि क्या महाराष्ट्र के लोगों की पहचान के प्रतीक राज ठाकरे और उद्धव ठाकरे बन रहे हैं? उत्तर है नहीं, बिलकुल नहीं.

राहुल की मुंबई यात्रा का स्वागत मराठियों ने किया, ख़ासकर भीड़ भरी लोकल ट्रेन में सफर करने की हिम्मत ने मराठी मानुष का दिल जीत लिया. कई मराठी युवक एवं युवतियों ने उन्हें सुपर स्टार तक कहा. राहुल का यह कदम दोनों ठाकरे बंधुओं के जवाब में स्वागत योग्य है. अगर टीवी फुटेज आपने देखी हों तो बॉडी लैंग्वेज ध्यान देने लायक़ है. राज और उद्धव के तने चेहरे, लाल और पीली होती आंखें, कड़ा शरीर, कुल मिलाकर हार के डर से भयभीत शरीर. वहीं राहुल गांधी का शांत, मुस्कराता चेहरा, सामान्य शरीर दर्शा रहा था मानों न कोई डर है और न ही तनाव.

अब क्या करेंगे दोनों नौजवान ठाकरे और बुज़ुर्ग बाल ठाकरे. क्या वे भाजपा के सारे महाराष्ट्रियन नेताओं को, संघ प्रमुख मोहन भागवत को मराठा द्रोही बताएंगे या महाराष्ट्र के लोगों को मराठा हितों को न समझने वाला बताएंगे. चुनाव के बाद हुई हार ने बुज़ुर्ग ठाकरे को जनता को गाली देते सुना. अब आगे?

ज़रूरत है एक ओर ठाकरे बंधु भारत की ज़रूरत, उसके मुद्दे, यहां रहने वालों की समस्याओं को समग्रता से समझें तथा ऐसे मुद्दे न उठाएं, जिनका रोजी–रोटी से कोई रिश्ता न हो. जिन्होंने भावनात्मक राजनीति की, उन्हें भूल जाने की ज़रूरत है. भारत की समस्याओं को समझने और हल करने की ज़रूरत है, न कि समस्याओं को बढ़ाने की. इतिहास देश का और देश के लोगों का होता है. उस इतिहास में उद्धव ठाकरे और राज ठाकरे कैसे दर्ज़ होंगे, इसका फ़ैसला तो उन्हें लेना है, पर महाराष्ट्र के लोग इतिहास में शान से याद किए जाएंगे कि उन्होंने हमेशा वक़्त आने पर देश का साथ दिया है, देश तोड़ने और दबंगई करने वालों का नहीं.

हमें जय महाराष्ट्र की जनता कहना चाहिए और जनता का अभिवादन करना चाहिए.

संपादक
editor.chauthiduniya.com

इस जलवायु में कोई बदलाव नहीं

कांची कोहली

वर्ष 2009 भारतीय वन क्षेत्र, तटीय इलाक़ों और कृषि योग्य भूमि के लिए बेहद अव्यवस्थित रहा. इस वर्ष लगभग हर महीने उद्योग और बुनियादी ढांचों के निर्माण की 100 परियोजनाओं को मंजूरी दी गई. नतीजतन आवास, जीविका और उन पर अपने अधिकारों की लड़ाई का नज़ारा हर तरफ़ देखने को मिला. अधिकारों की लड़ाई लड़ने वालों को एक संस्था से मदद भी मिली. यह नियामक संस्था देश के नाज़ुक पर्यावरण और जैव विविधता की रक्षा के लिए बना है.

सिविल सोसायटी तक उनकी पहुंच से यह मसला सुर्ख़ियों में बना रहा, लेकिन पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के कामकाज और पूर्वाग्रह से संदेह के बादल भी मंडराने लगे. और हो भी क्यों नहीं? आख़िर 2009 के पहले महीने में ही पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों के आकलन से संबंधित अधिसूचना ईआईए–2006 को और भी कमज़ोर करने का इरादा जता दिया गया. जब नए मंत्री ने पदभार संभाला तो प्रस्ताव को बनाए रखा गया. पिछले साल एक गुप्त प्रक्रिया के तहत पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने उसमें काफ़ी संशोधन किए. पहले परियोजनाओं को ईआईए अधिसूचना के तहत मंजूरी मिलती थी. वहीं दूसरी बातों पर ध्यान दें तो मंत्रालय ने इसमें नई बात जोड़ दी. उसने आधुनिकीकरण एवं विस्तार परियोजनाओं के लिए स्व–प्रमाणन प्रक्रिया अपनाने की सलाह दी. साथ ही मंत्रालय ने यह भी सुझाव दिया कि रियल एस्टेट और निर्माण परियोजनाओं की अधिकतम सीमा तय करने के लिए राज्य स्तर पर फ़ैसला आम सहमति के बजाए बहुमत के आधार पर हो.

अधिसूचना में बदलाव की ज़रूरत को समझने में लगभग एक साल का वक़्त लग गया. अब दिसंबर में आख़िरी संशोधन के साथ इसे पेश किया गया. किसी भी फ़ैसले पर पहुंचने में सिविल सोसायटी की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए आधी–अधूरी कोशिश की गई. निर्माण परियोजनाओं एवं दूसरे विकल्पों के लिए यथास्थिति बरक़रार रखी गई. हालांकि मंत्रालय की आंतरिक समिति ने स्व–प्रमाणन के मत को पूरी तरह बदल दिया. इस मत के मुताबिक़ यह फ़ैसला लेने का अधिकार औद्योगिक इकाइयों पर छोड़ा गया था कि उनकी विस्तार परियोजनाओं से प्रदूषण का स्तर बढ़ेगा अथवा नहीं. इस प्रविष्टि में उम्मीद की जो किरण नज़र आती है, वह यह है कि मंत्रालय निकट भविष्य में राष्ट्रीय पर्यावरण संरक्षण प्राधिकरण (एनईपीए) का गठन करेगा.

एनईपीए, ऐसा लगता है कि इसकी तक़दीर भी पहले से निर्धारित है. पर्यावरण के विनियमन (रेगुलेशन) के लिए नए संस्थागत ढांचे ज़रूरी हैं या नहीं, इस पर देश में बहस हो सके, उसके पहले ही भारतीय प्रधानमंत्री अमेरिका के सहयोग के लिए समझौते को तैयार हैं, ताकि पर्यावरण संरक्षण प्राधिकरण

पर्यावरण के विनियमन (रेगुलेशन) के लिए नए संस्थागत ढांचे ज़रूरी हैं या नहीं, इस पर देश में बहस हो सके, उसके पहले ही भारतीय प्रधानमंत्री अमेरिका के सहयोग केलिए समझौते को तैयार हैं, ताकि पर्यावरण संरक्षण प्राधिकरण (ईपीए) की स्थापना हो सके. यदि पर्यावरण एवं वन मंत्रालय केसितंबर 2009 के नोट में एनईपीए केलिए उम्मीद की कोई किरण नज़र आती है, तो भी इसका मतलब यह होगा कि मंत्रालय ख़ुद वार्ता प्रक्रिया एवं क़ानून बनाने में सहभागी रहेगा और उसे लागू करने का ज़िम्मा पेशेवर एवं विशेषज्ञ लोगों से संबद्ध संस्था को दे देगा.

(ईपीए) की स्थापना हो सके. यदि पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के सितंबर 2009 के नोट में एनईपीए के लिए उम्मीद की कोई किरण नज़र आती है, तो भी इसका मतलब यह होगा कि मंत्रालय ख़ुद वार्ता प्रक्रिया एवं क़ानून बनाने में सहभागी रहेगा और उसे लागू करने का ज़िम्मा पेशेवर एवं विशेषज्ञ लोगों से संबद्ध संस्था को दे देगा. व्यवहारिक तौर पर यह संस्था पर्यावरण मंत्रालय के क़ानूनों को मानने के लिए बाध्य होगी. अभी तक इसे लिखित तौर पर स्वतंत्र संस्था होने की बात कही जा रही है.

पिछले साल यह भी देखा गया कि नए मंत्री ने तटीय प्रबंधन क्षेत्र की अधिसूचना को रद्द कर दिया. उसे मौजूदा तंत्र की जगह लाने की बात कही जा रही है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि भारत के तटीय क्षेत्रों में किस तरह की गतिविधियों को अनुमति दी जा सकती है. वह कौन सा प्रस्ताव होगा, जिसे भारत के तटीय क्षेत्रों के वैज्ञानिक प्रबंधन के लिए मंजूर किया जाएगा? उद्योगों से बाध्यकारी प्रतिबंध हटाए जाएंगे और बुनियादी संरचनाओं के निर्माण कार्य को विशेष तटीय इलाक़ों के उच्च ज्वार क्षेत्र के 500 मीटर के दायरे में अनुमति दी जाएगी. इस मसले पर विचार–विमर्श की प्रक्रिया चल रही है और आख़िरी फ़ैसले को लटका कर रखा गया है. लेकिन, इसी बीच पर्यावरण एवं वन मंत्रालय पहले ही कुछ तटीय क्षेत्रों में एकीकृत तटीय क्षेत्र प्रबंधन योजना (आईसीजेडएमपी) की तैयारी की प्रक्रिया शुरू कर चुका है. वह यह काम विश्व बैंक की सहायता से कर रहा है. इस तरह की प्रबंधन योजनाएं प्रस्तावित तटीय प्रबंधन क्षेत्र की प्रमुख घटक हैं.

इसके समाधान का एक दूसरा उपाय भी है. वह है नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल बिल. इसकी सलाह कई वकीलों एवं पर्यावरणविदों ने दी है. नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल बिल को लागू करने के लिए मौजूदा दो तंत्रों राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण (एनईएए) और राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल (नेट) को रद्द करना पड़ेगा. इसकी वजह यह है कि इन दोनों तंत्रों को कभी पूरे अधिकार नहीं दिए गए, ताकि वे चुनौतियों का सामना करने में अहम रोल निभा सकें. नेट तो कभी गठित ही नहीं किया गया और एनईएए समुचित तौर पर कभी काम नहीं कर सका. आज यह संस्था इस बात को स्वीकार भी करती है. साथ ही आसानी से इस मामले को ख़ारिज़ करती है कि इसके फ़ैसले पर किसी एक सदस्य का प्रभुत्व क़ायम था. नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल में कई अहम क़ानून निहित हैं, बनिस्बत उन दो संस्थाओं के, जो पहले से प्रस्तावित थे. संसद के मानसून सत्र में इस बिल को चुपके से पेश किया गया और 2010 के बजट सत्र के दौरान इसकी समीक्षा की बात कही गई है. इस मुद्दे से संबंधित समस्याओं पर निकट भविष्य में बड़े और महत्वपूर्ण उपाय किए जा सकते हैं. इन उपायों का असर भी देखने को मिल सकता है कि आख़िर किस तरह भारत का पर्यावरण और यहां के लोग नियंत्रित होने चाहिए. लेकिन, यह वनक्षेत्र के लिए क्या बदलाव लाने वाला है, प्रबंधित तटों के विकास और कृषि योग्य भूमि के लिए इसने क्या मूल्य तय किए हैं? एक बात तो साफ़ है कि पीछे हटने या अपने फ़ैसले को बदलने का नाम कोई नहीं ले रहा है. पर्यावरण को उसके हाल पर छोड़ने को कोई तैयार नहीं है, ताकि वह ख़ुद फल–फूल सके. जलवायु का यह बदलाव नई संस्थाओं को जन्म देता है, जो व्यवस्थित तौर पर डिज़ाइन होती हैं और बड़ी कुशलता से इन्हें मंजूरी मिली होती है. इसका असर यह होता है कि अंततः हर साल नुक़सान तो धरती को ही झेलना पड़ता है.

(लेखिका ग़ैर सरकारी संस्था कल्पवृक्ष से जुड़ी हैं)

feedback@chauthiduniya.com

एक वजह यह भी थी कि केजीबी उस समय के एक पावरफुल ब्रिटिश नेता को सत्ता की कुर्सी पर बैठाना चाहता था. और, उसके इस काम में यह ब्रिटिश लीडर, जिसकी हत्या की गई, आड़े आ रहा था.

ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

केजीबी और ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंसी की आंखमिचौली

ख़ुफ़िया एजेंसियों की दास्तां जितनी रहस्यमयी होती है, उतनी ही रहस्यमयी होती है उनके एजेंटों की कहानी. हम सभी इस बात से वाक़िफ़ हैं कि ख़ुफ़िया एजेंसियों के जाल हर मुल्क में फैले होते हैं. हर जगह उनकी पैनी नज़र होती है. लेकिन ज़रा सोचिए, क्या कोई ख़ुफ़िया एजेंसी किसी मुल्क के सबसे शक्तिशाली नेता को भी अपना जासूस बना सकता है? इसी बात का रहस्य छिपा है इस कहानी में. तारीख़ थी 18 जनवरी, 1963. इस दिन एक ब्रिटिश लीडर की मृत्यु हुई. यह लीडर कोई और नहीं, बल्कि ब्रिटेन का प्रधानमंत्री बनने वाले नेताओं में शुमार था. लेकिन प्रधानमंत्री बनने से पहले ही इस नेता की हत्या बेहद रहस्यमयी तरीक़े से हो गई. आज तक उस राज़ को बेपर्दा नहीं किया जा सका है. वह राज़ कि आख़िर उसकी हत्या कैसे हुई? हम आपको बता दें कि यह शख़्स तत्कालीन प्रधानमंत्री के उत्तराधिकारी के तौर पर माना जाता था. इसकी हत्या एक ऐसी बीमारी से हुई, जिसकी तहक़ीक़ात के बावजूद अभी तक कुछ साफ़ नहीं हो सका है. हत्या के बाद इलाज करने वाले डॉक्टर से काफी पूछताछ की गई, ताकि हत्या की वजहों का पता लगाया जा सके. ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंसी एमआई-फाइव के अधिकारी ने इसकी जांच का ज़िम्मा अपने हाथों में लिया. आर्थर मार्टिन यही नाम था उस ब्रिटिश ख़ुफ़िया अधिकारी का. मार्टिन ब्रिटिश एजेंसी में सोवियत संघ के जासूसी अभियानों की निगरानी करता था. यानी उसे सोवियत ख़ुफ़िया एजेंसी की जानकारी अच्छी तरह से थी. जब मार्टिन ने डॉक्टर से पूछताछ की तो उसने मौत की जो वजह बताई, उसे सुनकर वह भी हैरान-परेशान रह गया. दरअसल, डॉक्टर ने बताया कि ब्रिटिश नेता की हत्या एक बेहद अनजान बीमारी से हुई. यह एक ऐसी बीमारी थी, जिससे रोगी के शरीर के सभी अंग धीरे-धीरे काम करना बंद कर देते हैं. और, एक समय के बाद उसकी मौत हो जाती है. यहां तक तो बात सही थी, लेकिन ब्रिटेन में जिस तरह का मौसम होता है, उसमें इस तरह की बीमारी के होने की कोई गुंजाइश ही नहीं थी. इसलिए डॉक्टर ने भी शक़ ज़ाहिर किया कि मुमकिन है, यह किसी की साज़िश हो हत्या की, ताकि उसके दुश्मन की मौत भी हो जाए और उस पर शक़ भी न किया जा सके.

सोवियत संघ का ख़ुफ़िया आतंक

आर्थर मार्टिन

आर्थर मार्टिन ने इस पूरे मामले की जांच के लिए केमिकल लेबोरेट्री का सहारा लिया, ताकि उसके ज़रिए कोई सुराग मिले और हत्या की साज़िश करने वालों पर शिकंजा कसा जा सके. लेकिन, यहां भी डॉक्टरों ने बताया कि यह एक ऐसी बीमारी है, जिससे शरीर के अंदरूनी अंगों में संक्रमण फैलता है. पर सोचने वाली बात है कि यह बीमारी ब्रिटिश नेता को कैसे हुई? इसका अंदाज़ा अभी तक किसी को नहीं लग पा रहा था. तभी अचानक इस मामले में एक खुलासा हुआ. यह खुलासा किसी और ने नहीं, बल्कि सोवियत ख़ुफ़िया एजेंसी केजीबी के एक जासूस ने किया. उसने बताया कि यह ब्रिटिश नेता कुछ दिनों तक केजीबी के डिपार्टमेंट 13 के संपर्क में था. हम आपको बता दें कि केजीबी में कई डिपार्टमेंट होते थे. और, डिपार्टमेंट 13 राजनीतिक हत्या के मिशन को अंजाम देता था. अब आप यह सोच रहे होंगे कि आख़िर इतनी बड़ी साज़िश का ख़ुलासा भला केजीबी का कोई जासूस क्यों करेगा? तो इसकी भी एक वजह थी. केजीबी का यह जासूस बाद में डिफेक्टर निकला. यानी यह जासूस भी केजीबी में किसी और एजेंसी का घुसपैठिया था. इस जासूस ने यह बताया कि केजीबी ने अपने इस मिशन को अंजाम देने के लिए काफी तैयारियां की थीं. डिपार्टमेंट 13 के मुख्य निदेशक जनरल रोडिन ने इस मिशन के लिए कई वर्षों तक ब्रिटेन में रहकर वहां के हालात को जानने-समझने की कोशिश भी की, ताकि ब्रिटेन समेत यूरोप में केजीबी के मिशन को बख़ूबी अंजाम दिया जा सके.

लेकिन इन सबके बीच एक सवाल सामने आता है कि आख़िर केजीबी ने इस ब्रिटिश नेता की हत्या करवाई भी तो क्यों? क्या उससे सोवियत संघ को कोई ख़तरा था? केजीबी को क़रीब से जानने वालों की मानें तो उन दिनों ब्रिटेन में केजीबी का अच्छा- ख़ासा प्रभाव था. अपने इसी वर्चस्व को क़ायम रखने के लिए केजीबी ने उस ब्रिटिश नेता की हत्या की साज़िश रची. एक वजह यह भी थी कि केजीबी उस समय के एक पावरफुल ब्रिटिश नेता को सत्ता की कुर्सी पर बैठाना चाहता था. और, उसके इस काम में यह ब्रिटिश लीडर, जिसकी हत्या की गई, आड़े आ रहा था. यही वजह है कि केजीबी ने उसे रास्ते से हटाने का पूरा प्रबंध कर लिया था. उसने उस लीडर को इस तरह मौत के घाट उतारा कि उस पर शक़ भी न किया जा सके. यही वजह थी कि केजीबी ने उसे मारने की बेहद जुदा साज़िश रची. केजीबी ने अपनी नापाक साज़िश को यहीं तक सीमित नहीं रखा. इस हत्या की गुत्थी को उसने इस तरह उलझा कर रख दिया कि पूरी ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंसी भी उसमें उलझ कर रह गई. अफ़वाह फैला दी गई कि तत्कालीन प्रधानमंत्री भी केजीबी के एजेंट हैं. इसका असर यह हुआ कि लोग अंदरूनी समस्या में ही उलझ कर रह गए. लेकिन इस पूरी साज़िश की असलियत यह थी कि जिस नेता की हत्या की गई थी, वह अमेरिका का कट्टर समर्थक था और ब्रिटेन में वह अमेरिकी हितों को काफ़ी तरज़ीह देता था. नतीजतन, केजीबी ने उसे अपने रास्ते से हटाकर अपने वर्चस्व को क़ायम रखने की पूरी कोशिश की.

केजीबी की यह कहानी कोई नई नहीं है. न जाने कितनी दफ़ा उसने ऐसे ख़तरनाक मिशनों को अंजाम दिया और उनमें सफल भी रही. जब किसी मुल्क का प्रधानमंत्री ही किसी ख़ुफ़िया एजेंसी के झांसे में आ जाए, तो वह एजेंसी ख़ुद कितनी शातिर होगी, इसका सहज अंदाज़ा लगाया जा सकता है. यही असलियत थी सोवियत संघ की ख़ुफ़िया एजेंसी केजीबी की, जिसने एक नहीं, कई राजनीतिक हत्या की वारदातों को अंजाम दिया.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

कसरत से वजन कम नहीं होता!

अधिकतर लोग दिन की शुरुआत मॉर्निंग वॉक या जॉगिंग से करते हैं. ऐसा इसलिए, क्योंकि वे इसे वजन कम करने का सबसे अच्छा तरीक़ा समझते हैं. लेकिन, ऐसा बिल्कुल भी नहीं है. हाल ही में हुए एक शोध के मुताबिक़, कसरत करने के बाद आप खाते क्या हैं, यह व्यायाम से भी ज़्यादा महत्वपूर्ण है. मिशिगन यूनिवर्सिटी के जेफरी हॉरोविट्ज के अनुसार, जो कुछ भी आप खाते हैं, वह शरीर के मेटाबोलिज़्म को प्रभावित करता है. उनका हालिया शोध जरनल ऑफ एप्लाइड साइकोलॉजी में प्रकाशित हुआ है. उन्होंने अपने शोधपत्र में लिखा है कि कसरत इंसुलिन संवेदनशीलता को बढ़ाता है. वह भी तब, जब आप कसरत के बाद कम कार्बोहाइड्रेट वाली सामग्री खाते हैं. साइंस डेली के अनुसार, इंसुलिन संवेदनशीलता बढ़ने का मतलब यह है कि शरीर के लिए रक्त प्रवाह से शुगर लेना आसान होता है, जहां उसका संग्रह किया जाता है और ईंधन के तौर पर इस्तेमाल भी.

यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन हॉस्पिटल में प्रयोग के लिए नौ लोगों को चार वर्गों में विभाजित किया गया. उनकी उम्र 28 से 30 वर्ष के बीच में थी. उन्हें अलग-अलग तरह के आहार दिए गए. उनमें से कुछ ने कसरत नहीं की, लेकिन उन्होंने खाना खाया. ऐसा शोधकर्ताओं ने उनकी डेली कैलोरी मिलाने के लिए किया. कुछ ने 90 मिनट तक कसरत किया और उसके बाद खाना खाया. उसके बाद उनका कैलोरी उपभोग कार्बोहाइड्रेट, वसा और प्रोटीन से मेल खा सका. तीसरे वर्ग ने 90 मिनट तक कसरत की और उसके बाद कम कार्बोहाइड्रेट वाली सामग्री खाई, लेकिन उनमें कैलोरी काफ़ी मात्रा में पाई गई. व्यायाम करने के बाद इंसुलिन संवेदनशीलता में वृद्धि हुई. वह भी तब, जब प्रतिभागियों ने व्यायाम करने के बाद अधिक मात्रा में कार्बोहाइड्रेट नहीं लिया था. उसके बाद भी उनकी इंसुलिन सक्रियता में महत्वपूर्ण तरीक़े से वृद्धि हुई. साइंस डेली के मुताबिक़, ख़राब इंसुलिन सक्रियता टाइप टू मधुमेह का सूचक है. इतना ही नहीं, इससे हार्ट अटैक की आशंका भी बढ़ जाती है.

भारत और चीन के लोग अधिक तनावग्रस्त

हाल के कुछ वर्षों में भारत और चीन जैसे एशियाई देशों की अर्थव्यवस्था काफ़ी तेज़ी से आगे बढ़ी है, लेकिन साथ ही तनाव की समस्या भी उसी रफ़्तार से बढ़ी है. मतलब यह कि तनाव ने तेज़ी से लोगों को अपनी गिरफ़्त में ले लिया है. एक अमेरिकी सर्वे में यह बात सामने आई है. सर्वे में हिस्सा लेने वाले 86 फ़ीसदी चीनियों और 57 फ़ीसदी भारतीयों ने कहा कि 2007 के बाद से उनका मानसिक तनाव लगातार बढ़ा है. यह सर्वे अमेरिका की कारपोरेट कंसल्टेंट कंपनी रेगस ग्रुप ने कराया है. एशियाई देशों में बड़ी निजी कंपनियों में काम करने वाले दस में से छह लोग कहते हैं कि ऑफिस में बहुत तनाव रहता है.

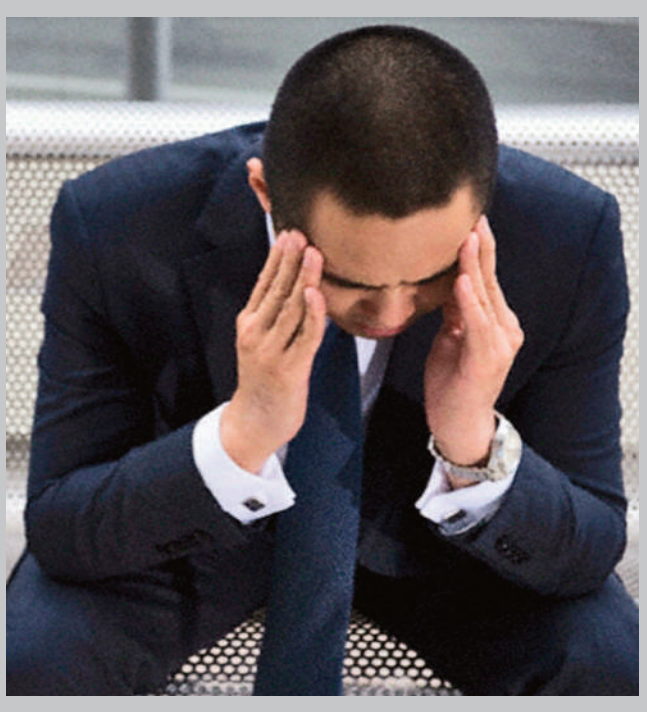

पंकज जैन भारत की एक बड़ी आईटी कंपनी में काम करते हैं, लेकिन इन दिनों एक प्रोजेक्ट के सिलसिले में जर्मनी में हैं. उन्होंने कहा कि जर्मनी के मुक़ाबले भारत में कहीं ज़्यादा तनाव होता है, क्योंकि जर्मनी के मुक़ाबले यहां ज़्यादा घंटे काम करना पड़ता है. जर्मनी में नौ से छह घंटे काम करना होता है, लेकिन भारत में सुबह नौ बजे ऑफिस पहुंचने के बाद पता नहीं होता है कि घर लौटना कितने बजे मुमकिन हो पाएगा. कई जानकार कहते हैं कि भारत और चीन में कंपनियों को अपने मैनेजरों को इस तरह प्रशिक्षित करना चाहिए कि वह ऑफिस के तनाव को कम कर सकें. भारत में एक अमेरिकी मल्टीनेशनल टेक्नोलॉजी कंपनी में काम करने वाले सॉफ्टवेयर इंजीनियर सौरभ लापालकर कहते हैं कि तनाव के लिए काम का दबाव ही ज़िम्मेदार नहीं है. शंघाई में सिटी कॉर्प सॉफ्टवेयर टेक्नोलॉजी सर्विसेज में सिस्टम ऑपरेटर के तौर पर काम कर रही लिउ ली कहती हैं कि काम करने के निश्चित घंटे हों तो उससे मदद मिलती है.

राशिफल

15 फरवरी–21 फरवरी 2010

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)
व्यवसायिक व्यस्तता बढ़ेगी. आर्थिक पक्ष मज़बूत होगा. विरोधी सक्रिय रहेंगे. संतान के कारण चिंता बढ़ेगी. किसी बात से निजी सुख में व्यवधान आ सकता है. अपनी सेहत का ध्यान रखें.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)
अधीनस्थ कर्मचारी, पड़ोसी अथवा छोटे भाई के कारण तनाव बढ़ सकता है. किए गए कार्य सार्थक होंगे. सृजन या निर्माण की दिशा में चल रहे प्रयास फलीभूत होंगे. आर्थिक मामलों में सफलता मिलेगी.

मिथुन (21 मई से 20 जून)
धन अथवा वंश वृद्धि की संभावना है. नए वाहन की खरीद का योग है. वाणी पर नियंत्रण बनाए रखें. व्यवसायिक व्यस्तता रहेगी. भागदौड़ की स्थिति बनी रहेगी. मन अतृप्त रहेगा. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)
सामाजिक कार्यों में रुचि और व्यस्तता बढ़ेगी. लोक कल्याण के लिए प्रेरित होंगे. मनोरंजन के सुखद अवसर मिलने के योग हैं. आर्थिक दिशा में किए जा रहे प्रयास सफल होंगे.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)
यात्रा और देशाटन के योग हैं. व्यवसायिक प्रयास फलीभूत होंगे. ऋण लेने की कोशिश में आप कामयाब होंगे. आर्थिक पक्ष मज़बूत होगा. रुपये-पैसे के लेनदेन में सावधानी बरतें. डिप्रेशन की स्थिति न आने दें.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)
आर्थिक मामलों में सफलता मिलेगी. पारिवारिक दायित्वों की पूर्ति होगी. जीवनसाथी का भरपूर सहयोग मिलेगा. उपहार या सम्मान का लाभ मिलेगा. संतान के व्यवहार से चिंतित रहेंगे. व्यर्थ की भागदौड़ रहेगी.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर)
पारिवारिक मामलों में सफलता मिलेगी. आप घर के मुखिया या संबंधित अधिकारी का कोपभाजन बन सकते हैं. व्यर्थ की उलझनें रहेंगी और तनाव भी. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहने की जरूरत है.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर)
आर्थिक मामलों में जोख़िम न उठाएं. रुपये-पैसे का लेनदेन कष्टकारी हो सकता है. संबंधों में तनाव रहेगा. व्यर्थ की भागदौड़ रहेगी. कोई ऐसा कार्य हो सकता है, जो आपके हित में न हो.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)
यात्रा-देशाटन की स्थिति बन सकती है. व्यवसायिक प्रगति होगी. धन, सम्मान, यश, कीर्ति में वृद्धि होगी. पारिवारिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. आर्थिक मामलों में जोख़िम न उठाएं. आजीविका के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिलेगी.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)
दांपत्य जीवन सुखमय होगा. ससुराल पक्ष का भरपूर सहयोग मिलेगा. व्यवसायिक सुखद समाचार मिलेगा. आर्थिक मामलों में प्रगति होगी. यात्रा-देशाटन का लाभ मिलेगा. आजीविका के क्षेत्र में प्रगति होगी. वाणी में मधुरता बनाए रखें.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)
विरोधी सक्रिय रहेंगे. स्वास्थ्य अच्छा रहेगा. प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी. किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे हैं तो उसमें सफलता के योग बने हुए हैं. धन व्यय का योग है, इसलिए सोच-समझ कर पैसे खर्च करें. मन अशांत रहेगा. अनचाही यात्राएं करनी पड़ सकती हैं.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)
संतान के संबंध में कोई सुखद समाचार मिलेगा. पारिवारिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. धन, सम्मान, यश और कीर्ति में वृद्धि होगी. आय के नए रास्ते खुलेंगे. उपहार या सम्मान में वृद्धि होगी. शिक्षा प्रतियोगिता के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिलेगी.

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

हैती की राजधानी पोर्ट ओ प्रिंस में जब स्वास्थ्य एवं जनसंख्या मंत्री डॉ. रॉबर्ट ऑगस्टी से इस बाबत पूछा गया तो उन्होंने कहा कि सरकार अपने मज़दूर केंद्रों पर मुफ्त स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया करा रही है.

क्या तालिबान आतंकवाद को बेच देगा?

राहुल मिश्र

तालिबान को खदेड़ने के लिए अमेरिका ने आठ साल पहले अफ़ग़ानिस्तान में क़दम रखा. एक हफ़्ते पहले लंदन में तालिबानियों का गर्मजोशी के साथ स्वागत किया गया कि वे आगे आकर सत्ता में भागीदारी करें. इससे भी अहम बात यह है कि तालिबानियों को ऐसा करने के लिए 1.5 बिलियन डॉलर की पेशकश की गई. किसी भी देश को अपनी सोच बदलने और अपनी नीतियों में फेरबदल करने की आज़ादी होती है, लेकिन उस फेरबदल के लिए उसे सफाई देने की ज़रूरत होती है. लंदन में ऐसा नहीं किया गया. लिहाज़ा कई सवाल अपना जवाब तलाश रहे हैं. क्या अफ़ग़ानिस्तान में आतंकवाद की ख़रीद-फरोख्त हो सकती है. मौजूदा हालात में क्या तालिबान आतंकवाद को बेच देगा. और, क्या अमेरिका के पास अफ़ग़ानिस्तान से बाहर निकलने के लिए इसके अलावा कोई और विकल्प नहीं है.

आठ साल पहले दुनिया भर के टेलीविज़नों पर तालिबानी कहर के वीडियो प्रसारित किए जा रहे थे. पूरी दुनिया को यह दिखाया जा रहा था कि किस तरह से चरित्रहीनता के आरोप को आधार बनाते हुए वहशी तालिबानी एक महिला को मौत के घाट उतार रहे थे. जिन लोगों को देखना गंवारा था, वे यह भी देख सकते थे कि किस तरह से तालिबानी किसी शख़्स का हाथ-पैर काट देते हैं और कितनी बेरहमी से उसका सिर कलम कर देते हैं. इन वीडियो को देखकर पूरी संभ्रांत दुनिया स्तब्ध थी. दरअसल, अपनी टीवी स्क्रीन पर लगातार ऐसे वीडियो प्रसारित होते देखकर दुनिया भर में यह आमराय बन गई कि अगर तालिबान ने अमेरिका में 9/11 के हमलों को अंजाम देने वाले अलक़ायदा को शरण न भी दी होती, तो भी उसकी बर्बरता और वहशीपन को देखने के बाद अमेरिका और पश्चिमी देशों की अफ़ग़ानिस्तान में कवायद को जायज़ ठहराया जा सकता है. लेकिन लंदन में आयोजित समारोह, जिसमें दुनिया के सभी महत्वपूर्ण देशों ने शिरकत की, में तालिबान की दरिंदगी का ज़िक्र नहीं हुआ. बल्कि, इस्लाम के नाम पर इस स्तर का अपराध करने वालों को सत्ता में भागीदारी के लिए आमंत्रित किया गया और ऐसा करने के लिए भारी-भरकम रक़म का प्रलोभन भी दिया गया.

मार्च 2009 में सत्ता संभालने के बाद अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने कहा था कि तालिबान की दरिंदगी को हर हाल में परास्त करने की ज़रूरत है. और, अब लंदन में बयान दिया गया कि अफ़ग़ान जिहादियों को सत्ता में भागीदारी दी जाएगी. लिहाज़ा यह साफ़ है कि किस तरह से अमेरिकी नीति को उलट दिया गया है. अमेरिका जिसके ख़िलाफ़ युद्ध लड़ रहा था, अब उसी तालिबान से आतंकवाद का सौदा करेगा और फिर उनके हाथ काबुल की कमान सौंप देगा. इसके साथ ही अफ़ग़ानिस्तान में पाकिस्तान की भूमिका को भी नए सिरे से परिभाषित कर दिया गया है. जहां पिछले आठ सालों तक पाकिस्तानी सेना और आईएसआई को यह ज़िम्मेदारी दी गई थी कि वह तालिबान और अलक़ायदा को ख़त्म करने में अमेरिका की हर मुमकिन मदद करे. वहीं अब पाकिस्तान आतंकवाद की ख़रीदारी में बिचौलिए की भूमिका अदा करेगा.

लिहाज़ा, अफ़ग़ानिस्तान में आतंकवाद को बाज़ार में लाने की तैयारी कर ली गई है. यूरोप के ख़रीदार देश तैयार हैं. अफ़ग़ानिस्तान की सरकार तालिबान को साझीदारी देने के लिए तैयार है. पाकिस्तान भी अपनी भूमिका में आ चुका है और अमेरिका को अफ़ग़ानिस्तान से बाहर निकलने का रास्ता दिख रहा है. लेकिन सवाल यह खड़ा होता है कि क्या तालिबानी कमांडरों को यह सौदा मंजूर होगा? अगर मान लिया जाए कि तालिबानियों को आरामशुदा ज़िंदगी की तलाश है और ज़िहाद में मौत के सिवाय कुछ हाथ नहीं लगने वाला तो भला तालिबान यह सौदा पहले क्यों नहीं करता? आज जब तालिबान एक बार फिर अफ़ग़ानिस्तान में अपनी खोई हुई ज़मीन को वापस छीन रहा है, अमेरिका के नेतृत्व में यूरोपीय देशों की सेनाएं खाक छान रही हैं और लगातार हो रहे हमलों से अफ़ग़ानिस्तान को छोड़ने के लिए आंतरिक दबाव बढ़ रहा है तो क्या इस सूरत में तालिबान किसी तरह का समझौता करना चाहेगा? क्या 1.5 बिलियन डॉलर की रक़म से तालिबानी जिहाद को ख़रीदा जा सकता है?

पिछले आठ सालों तक पाकिस्तानी सेना और आईएसआई को यह ज़िम्मेदारी दी गई थी कि वह तालिबान और अलक़ायदा को ख़त्म करने में अमेरिका की हर मुमकिन मदद करे. वहीं अब पाकिस्तान आतंकवाद की ख़रीदारी में बिचौलिए की भूमिका अदा करेगा.

वास्तविकता यह है कि अफ़ग़ानिस्तान में तालिबान के कुछ छोटे-मोटे लड़ाकों ने तालिबान की सरपरस्ती को छोड़ा है और उसके बाद से ही वे ज़िंदगी के लिए मोहताज़ हैं. काबुल की जेल में रहकर वे अपने फ़ैसले पर अफ़सोस कर रहे हैं और उनकी बस यही चाहत है कि वे किसी तरह से वापस तालिबान में जाकर शामिल हो जाएं. लेकिन, तालिबान में गद्दारों के लिए मुकर्रर मौत की सज़ा उन्हें ऐसा करने से रोक रही है. वहीं, जहां तक सवाल उन कट्टर तालिबानियों का है, जिन्होंने अमेरिकी और यूरोपीय सेना के ख़िलाफ़ मोर्चा खोल रखा है, उन्हें यह सौदा करना अपने धर्म के ख़िलाफ़ लग रहा है. जिस जिहाद को लेकर वे इस आग में कूदे हैं और आज काबुल फतह की आस लगा रहे हैं, इस तरह के सौदे से वे अपनी उस सोच को बेचना नहीं चाहते. ऐसे कट्टर तालिबानी अफ़ग़ानिस्तान में करज़ई सरकार को एक भ्रष्ट सरकार और पश्चिम देशों का दलाल करार देते हैं. ज़्यादातर तालिबानी शहरों से दूर गांवों में सुकून महसूस करते हैं. अफ़ग़ानिस्तान के इन गांवों में आज भी तालिबान की पकड़ है. देश के शहरी इलाक़ों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक पहलुओं से अफ़ग़ानिस्तान के गांव जुदा हैं. इन इलाक़ों में तालिबानी वर्चस्व के बावजूद क्षेत्रीय रीतिरिवाज़ टकराव की स्थिति में नहीं हैं. बड़े केश रखना, पांचों वक़्त की नमाज़ अदा करना, महिलाओं और पुरुषों को घर के बाहर अलग रखना, इस्लामी क़ानून का पालन करना सभी की ज़िंदगी का आधार है. इन इलाक़ों में एक सामान्य पश्तून आठ सालों के करज़ई शासन और विदेशी सेना की मौजूदगी से सबसे ज़्यादा नुक़सान में रहा है. पश्तूनियों का मानना है कि इन आठ सालों के दौरान उनके विरोधी क़बीले-ताज़ीक, उज़्बेक एवं हज़रा को तालिबान की हार के बाद मुनाफ़ा दिया गया और पश्तूनियों के गांव सरकार की बेरुख़ी, अत्याचार, भ्रष्टाचार और युद्ध से सबसे ज़्यादा नुक़सान में रहे. यही वजह है कि अफ़ग़ानिस्तान के ज़्यादातर ग्रामीण इलाक़ों में तालिबानियों के ख़िलाफ़ कोई ख़ास प्रतिरोध नहीं रहा और इस्लामिक क़ानून की मदद से यहां जल्द से जल्द अपराधियों को सज़ा देने का प्रावधान है.

विदेशी सेनाओं पर जीत और ग्रामीण इलाक़ों में तालिबानी वज़ूद के चलते ज़्यादातर तालिबानी अपने ज़ेहाद को ख़ुदा की मर्ज़ी मान रहे हैं और वे इस रास्ते को छोड़ना अपने धर्म से समझौता करना मान रहे हैं. इन हालात में यह मान लेना कि तालिबान से आतंकवाद की ख़रीद इतना आसान काम नहीं है. अमेरिका अगर इस जीत की उम्मीद में अफ़ग़ानिस्तान से बाहर निकलने की कोशिश कर रहा है तो यह साफ़ समझ लेना चाहिए कि तालिबान का आतंक बिकाऊ नहीं है.

rahul@chauthiduniya.com

हैती: बदहाल स्वास्थ्य सेवाओं के लिए ज़िम्मेदार कौन?

रूपा चिनाय

तरक़्क़ी का मापदंड अगर स्वास्थ्य को माना जाए तो कैरेबियाई देश हैती इस मामले में सबसे निचले पायदान पर होगा. यह विकासशील देशों का एक दुखद पहलू है, जो साफ़ करता है कि विकासशील मुल्क खाद्य सुरक्षा और स्वास्थ्य का अधिकार खोते जा रहे हैं. जबकि इन दोनों में काफ़ी गहरा संबंध है. और, इस तरह यदि कोई देश खाद्य सुरक्षा और स्वास्थ्य का अधिकार गंवाता है तो इसका सीधा मतलब है कि वह अपनी संप्रभुता गंवाने के कगार पर है.

हैती का एक शहर है जैकमेल. इसके ग्रामीण इलाक़े के एक सरकारी अस्पताल की हालत यहां की स्वास्थ्य सेवाओं की सारी पोल खोल देती है. इस अस्पताल के महिला वार्ड में एक महिला दर्द से कराहती रहती है, लेकिन वहां मौजूद नन कुछ भी कर पाने में असमर्थ है. क्योंकि, अस्पताल में न डॉक्टर हैं और न ही इलाज के लिए ज़रूरी संसाधन. मरीज़ों को जीवन देने वाली दवाएं अस्पताल द्वारा मुफ्त में मुहैया नहीं कराई जाती हैं. मरीज़ इतने ग़रीब हैं कि वे इन दवाओं को ख़रीद नहीं सकते. जैकमेल अस्पताल शहर के बीच में स्थित है. इसकी आबादी 5 लाख है. पूर्वी और पश्चिमी किनारों या पहाड़ी इलाक़ों में रहने वाले लोग बमुश्किल ही यहां पहुंच पाते हैं. न तो सड़क एवं न ही सार्वजनिक परिवहन की सुविधा है. सुदूर क्षेत्रों से जैकमेल तक पहुंचने के लिए मरीज़ों को आठ-आठ घंटे तक बोट से सफ़र करना पड़ता है. इसके बावजूद यदि मरीज अस्पताल तक पहुंच भी जाता है तो इसकी कोई गारंटी नहीं है कि उन्हें चिकित्सा सुविधा मिल ही जाए. दरअसल डॉक्टरों को काम के पैसे नहीं मिलते और बहुत से डॉक्टर यहां काम ही नहीं करना चाहते. तीन-चार सप्ताह बीत जाते हैं, पर बिजली आने का नाम ही नहीं लेती. यहां बिजली गैस या पेट्रोल से तैयार होती है और इन ईंधनों के बढ़ते दामों के कारण उपभोक्ता बिल की भरपाई करने में असमर्थ हैं. नतीजतन बिजली की आपूर्ति बुरी तरह प्रभावित होती है. जैकमेल अस्पताल में सिर्फ़ एक ही एंबुलेंस है और उसका इस्तेमाल भी पूरे विभाग के लिए होता है.

हैती की राजधानी पोर्ट ओ प्रिंस में जब स्वास्थ्य एवं जनसंख्या मंत्री डॉ. रॉबर्ट ऑगस्टी से इस बाबत पूछा गया तो उन्होंने कहा कि सरकार अपने मज़दूर केंद्रों पर मुफ्त स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया करा रही है. महिलाएं उन केंद्रों से मुफ्त दवाइयां ले सकती हैं. जब हमने यह पूछा कि ये सारी सुविधाएं जैकमैल के एकमात्र सरकारी अस्पताल में क्यों नहीं उपलब्ध हैं? तो मुझे इस सवाल का स्पष्ट जवाब नहीं मिला. डॉ. ऑगस्टी ने कहा कि लोगों तक स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाने में अभी भी हमें परेशानियां उठानी पड़ रही हैं. लेकिन हम हैती के लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के साथ मिलकर काम कर रहे हैं. उनका कहना है कि हैती में 20 से भी अधिक सालों तक अव्यवस्था का माहौल बना रहा और हम अपने देश के पुनर्निर्माण का काम शुरू कर रहे हैं.

हैती के ग़ैर सरकारी संगठनों के मुताबिक़, सरकार लोगों को जीवन रक्षक दवाइयां उपलब्ध नहीं करा रही है. हालांकि विश्व स्वास्थ्य संगठन आम ज़रूरतों की दवाइयां लोगों को मुहैया करा रहा है. आम लोगों की सहायता के लिए यदि हैती को आर्थिक मदद मिल भी रही है तो ख़ासकर एचआईवी/एड्स से निपटने के लिए. अमेरिकी सरकार हैती की सबसे बड़ी सहायक है और वह इसमें अहम भूमिका निभा रही है. उसके अधिकांश पैसों से अमेरिकी दवा उद्योग ख़ूब फल-फूल रहे हैं. उसने एचआईवी/एड्स की दवाओं को बनाने में काफ़ी पैसा निवेश किया है. इन सबके बावजूद यहां सुविधाओं की भारी कमी है. मसलन, प्रयोगशालाएं और प्रशिक्षित चिकित्सक नहीं हैं. हैती के लोग अमेरिकी कार्यक्रम के दूरगामी असर को लेकर चिंतित हैं. अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने इन कार्यक्रमों की शुरुआत की थी, जिसके तहत एचआईवी/एड्स की मुफ्त दवाइयां उपलब्ध कराने की योजना थी. ये योजनाएं कब तक चलेंगी, इसकी कोई गारंटी नहीं दी गई. इसके अलावा एचआईवी/एड्स से संबंधित दवाओं से कई तरह की संक्रामक बीमारियां जैसे टीबी या डायरिया होने का ख़तरा बना रहता है.

जैकमेल के स्वास्थ्य सेवा निदेशक डॉ. गैस्टन के मुताबिक़, मानव संसाधन समेत सभी सुविधाएं राजधानी पोर्ट ओ प्रिंस में हैं, पर आम लोगों की पहुंच यहां तक नहीं है. गंभीर रूप से बीमार लोगों को भी जैकमेल आने में दो दिन से अधिक का वक़्त लग जाता है. हैती के संभ्रांत लोग इलाज के लिए पड़ोसी देश डोमनिक रिपब्लिक या अमेरिका जाते हैं. बाक़ी जैकमेल अस्पताल में पड़े रहते हैं या मरने को मजबूर होते हैं.

अंतिम उपाय के तौर पर मरीज़ पेशेवर चिकित्सकों के पास जाते हैं. लेकिन यहां भी उन्हीं लोगों की पहुंच है, जिनके पास पैसे हैं. हैती में प्रसव के दौरान मातृ मृत्यु दर सबसे ज़्यादा यानी 630 महिलाएं प्रति 10 हज़ार है. इसकी वजह मुख्यतया एनीमिया और प्रसव के दौरान अधिक रक्तस्राव है. वहीं पांच साल से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर प्रति एक हज़ार पर 87 है. जबकि एक साल से कम उम्र के बच्चों का यही आंकड़ा प्रति एक हज़ार पर 53 है. क्यूबा, यूरोपीय एवं कनाडाई सहायता एजेंसियां हैती की स्वास्थ्य सेवाओं के विकास के लिए काम कर रही हैं. लेकिन यह प्रयास पूरे देश भर में पांच छोटे स्तर की परियोजनाओं तक सीमित हैं. इसके तहत जैकमेल नहीं आता है. हालांकि अमेरिकी सहयोग से हैती में अनाथालयों की व्यवस्था की जा रही है, लेकिन यूनिसेफ के मुताबिक़, दो लाख अनाथ बच्चों को संगठित तौर पर कोई सहायता नहीं मिल पा रही है. वूडू यहां की एक परंपरागत चिकित्सा पद्धति है. अफ्रीका से जो दास यहां आए, वही इस पद्धति को हैती में लाए थे. अब यह लोगों की जीविका की प्रमुख साधन बनी हुई है. यह आधिकारिक तौर पर मान्य भी है, लेकिन इसे सरकार द्वारा ज़्यादा सहयोग नहीं मिला है. यह बातें हमें एक वूडू पुजारी क्लीस्टीन सौम्मुरेविल ने बताईं. उनके मुताबिक़, वूडू एवं पारंपरिक चिकित्सा रोगों के इलाज में काफ़ी अहम भूमिका निभाती है और आधुनिक दवा के इस्तेमाल के पहले इसका प्रयोग किया जाना चाहिए.

सौम्मुरेविल कहते हैं कि काले जादू के प्रयोग से नुक़सान हो सकता है, लेकिन इसका इस्तेमाल बचाव, लोगों की सुरक्षा और अच्छे कामों के लिए ज़रूर किया जाना चाहिए. ग्रामीण रोगियों की हालत दयनीय है, क्योंकि आधुनिक चिकित्सा उन्हें उपलब्ध नहीं है और सरकार उनकी कोई मदद नहीं कर रही है.

ऐसी ही एक पहल जैकमेल के पड़ोसी शहर मैरीगट में की गई. युवा संगठन पेड़-पौधे लगा रहे हैं. लोग भारतीय परियोजनाओं का स्वागत कर रहे हैं. यहां के कई इलाक़े हिंसा की चपेट में हैं. गलियों से गुज़रना भी ख़तरे से ख़ाली नहीं है. एक सामुदायिक नेता ने बताया कि कई हथियारबंद समूह इस क्षेत्र में सक्रिय हैं. समुदाय में अस्थिरता का माहौल पैदा करने वाले नेता इन्हें बंदूक़ और रोज़गार दे रहे हैं. इनमें कुछ तो आपसी संघर्ष में ही अपनी जान गंवा देते हैं. ऐसे समूहों ने परियोजनाओं को बंद कराने की कोशिश की और शुरू के दो साल तो बेहद ही मुश्किल एवं ख़तरनाक थे, क्योंकि लोगों को भय के माहौल में काम करना पड़ता था. लेकिन धीरे-धीरे जैसे परियोजना का लाभ समुदाय में दिखने लगा, भय का माहौल भी ख़त्म हो गया. लोगों को इस बात का अहसास हुआ कि ये परियोजनाएं उनके फ़ायदे के लिए ही हैं. वही लोग कहने लगे कि यदि आप हमें काम देंगे तो हम हिंसा का रास्ता छोड़ने के लिए तैयार हैं. उसके बाद से समुदाय में हिंसा कम होने लगी. स्थानीय लोग भी ख़ुद को संगठित करने लगे, ताकि दूसरे क्षेत्रों के गैंग से परियोजना में कोई बाधा न आने पाए.

दक्षिणी देश हैती में अहम भूमिका निभा सकते हैं. इस बात को साफ़ ज़ाहिर करता है कैरीफोर फिल्लस शहर. हैती के पत्रकारों ने अफ्रीका और एशिया से संबंधों को बढ़ाने की वकालत की है, ताकि विकासशील देशों के अनुभवों से वे सारी बातें सीखी जा सकें, जो हैती और वहां के लोगों की ज़रूरतों के लिए महत्वपूर्ण हैं.

(लेखिका मुंबई स्थित पब्लिक हेल्थ एनालिस्ट हैं)

feedback@chauthiduniya.com

साई की महिमा हमेशा अद्‌भुत होती है. जब कोई भक्त साई की शरण में जाता है, वह वहां से ख़ाली हाथ नहीं लौटता. एक नहीं कई उदाहरण हैं, जब साई ने अपने भक्तों को नया जीवन दिया.

साई बाबा सबसे सक्रिय शक्ति हैं: किशोरी शहाणे

विकास कपूर

हिंदी एवं मराठी फ़िल्मों, टीवी धारावाहिकों और नाटकों में समान रूप से सक्रिय एवं सफल अभिनेत्री किशोरी शहाणे का सारा जीवन साईभक्ति को समर्पित है. *तुम मिले, सरहद, हफ़्ता बंद, शागिर्द, चांद सा रोशन चेहरा, बांबे गॉड फादर एवं शिरडी साई बाबा* आदि हिंदी और *एक देव धोबी पछाड़, महराची साड़ी* आदि मराठी फ़िल्मों में अपने भावपूर्ण अभिनय की छाप छोड़ चुकी किशोरी ने टेलीविज़न पर कई सफल धारावाहिकों जैसे- *घर एक मंदिर, कोई अपना सा, संतान, सिंदूर, जस्सी जैसी कोई नहीं, सोलह श्रृंगार, ॐ नमः शिवाय, श्री गणेश, साईभक्तों की सच्ची कहानियां, वक़्त बताएगा* एवं *कौन अपना कौन पराया* आदि में भी काम किया है. कलर्स चैनल पर किशोरी का आने वाला नया धारावाहिक है *ऐसे करो न विदा*. पिछले दिनों किशोरी से एक लंबी बातचीत हुई. पेश हैं मुख्य अंश:

ॐ साई राम किशोरी जी.

ॐ साईराम.

हम आपकी साईभक्ति के बारे में जानना चाहते हैं?

(मुस्करा कर मन ही मन बाबा को प्रणाम करते हुए) देवा तो मेरी हर श्वांस में बसे हैं. मेरे जीवन का हर पल देवा के श्रीचरणों में समर्पित है. जब पहले-पहल मेरा साई बाबा के महान चरित्र से परिचय हुआ तो मन में एक उत्कंठा सी जागी कि इनके विषय में और जानना चाहिए. पहली बार जब मैंने विस्तार से श्री साई सच्चरित्र को सुना तो अफ़सोस होने लगा कि मेरा जन्म तब क्यों नहीं हुआ, जब देवा शिरडी में अवतरित हुए थे. मन में हर पल एक हूक़ सी उठती रहती थी कि क्या मैं कभी अपने साई को देख पाऊंगी? लेकिन आप विश्वास कीजिए, जैसे-जैसे मेरा मन साई भक्ति में डूबता गया, देवा ने मेरी आस को अपने विश्वास से भरे हाथों में थाम लिया. हर पल मुझे ऐसा अनुभव होने लगा कि देवा मेरे साथ हैं, मेरे आसपास हैं. मुझे बाबा से लगभग वैसा ही स्नेह मिला, जैसा लक्ष्मी बाई शिंदे को मिला था. फ़िल्म *शिरडी साई बाबा* में जब मुझे लक्ष्मीबाई के रोल के लिए कास्ट किया गया, तब ऐसा ही लगा कि बाबा ने मेरी जन्मों-जन्मों की साध पूरी कर दी.

क्या आप बचपन से ही साई बाबा की पूजा करती आई हैं?

नहीं, हमारे घर में गणपति जी की पूजा की जाती थी. गणपति महाराष्ट्र के आराध्यदेव हैं. हम अब भी उनकी पूजा करते हैं, परंतु अब गणपति और साई में कोई भेद नहीं. मुझे मेरे मंदिर की गणपति प्रतिमा में प्रायः साई दर्शन होते हैं.

आपके जीवन में साई कृपा का कभी कोई चमत्कार घटा?

मैं आपसे बात कर रही हूं, हंस रही हूं, स्वस्थ एवं सुखी हूं, इससे बड़ा साई कृपा का चमत्कार और क्या हो सकता है. फिर भी एक घटना आपको बताती हूं. बांबे-पूना हाईवे पर हमारा एक फार्म हाउस है. एक रात हम बांबे से लंबी ड्राइव करके फार्म हाउस पहुंचे तो वहां लाइट नहीं थी. हम काफ़ी थक गए थे. मेरे पति दीपक जी ने माचिस जलाकर देखा और हम बिस्तर पर लेट गए. थकान के कारण जल्दी ही नींद आ गई. सुबह जब नींद खुली तो शायद आठ बज रहे थे. हमने दीपक जी को जगाया तो वह अपनी आदत अनुसार तकिया हाथ में लेकर पलंग पर ही बैठने लगे. तभी हम दोनों की निगाह तकिया के नीचे से सरकते एक पांच-छह फिट लंबे सांप पर पड़ी, जो हमारे देखते-देखते ही पलंग से उतर कर खिड़की से बाहर निकल गया. कुछ पल तक हमारी आवाज़ ही नहीं निकली. फिर सारी बात समझ में आई कि सारी रात सांप दीपक जी की तकिया के नीचे ही पड़ा रहा, पर साई कृपा से उसने दीपक जी को ज़रा भी हानि नहीं पहुंचाई. सबसे पहले हम दोनों ने साई बाबा को जीवनरक्षा का शत-शत धन्यवाद दिया. उस दिन बाबा के प्रति हमारी आस्था और मज़बूत हो गई. मुझे यह अनुभव हुआ कि साई बाबा इस संसार की सबसे सक्रिय शक्ति हैं, जो अपने भक्तों की रक्षा के लिए सदा तत्पर रहते हैं.

पिछले दिनों आपने महाराष्ट्र की कुलदेवी मोटाची रेणुका पर एक मराठी फ़िल्म का निर्माण किया था. दर्शकों का कैसा रिस्पांस मिला?

बहुत अच्छा. अब यह फ़िल्म शीघ्र ही स्टार प्रवाह पर प्रसारित होगी. हमने इन दिनों साई बाबा के जीवन चरित्र पर जैकी श्रॉफ (टाइटल रोल) के साथ एक फ़िल्म *मालिक एक* पूरी की है, जिसे अप्रैल में रिलीज़ करने की योजना बन रही है. बस बाबा का आशीर्वाद चाहिए.

अगले अंक में
अनिल शर्मा के साई अनुभव

साई पूर्ण ब्रह्म हैं

असीम खेत्रपाल

अनंतकोटि ब्रह्मांड के नायक राजाधिराज योगीराज श्री सच्चिदानंद साई नाथ महाराज ही ब्रह्म एवं पूर्ण हैं. ईशावास्योपनिषद् का प्रारंभ पूर्णता के परिचायक एक श्लोक से होता है, ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते. पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते. ॐ शांतिः शांतिः शांतिः (अर्थात वह सच्चिदानंद घन परब्रह्म पुरुषोत्तम सब प्रकार से सदा सर्वदा परिपूर्ण है. यह जगत भी उसी परब्रह्म से ही पूर्ण है, क्योंकि यह पूर्ण उस पूर्ण पुरुषोत्तम से ही उत्पन्न हुआ है. इस प्रकार परब्रह्म की पूर्णता से जगत पूर्ण है, इसलिए भी वह पूर्ण है. उस पूर्ण ब्रह्म में से पूर्ण को निकाल लेने पर भी पूर्ण ही बचा रहता है.) यहां उपनिषदकार दो आश्चर्यजनक बातें कहता है. पहली तो यह कि पूर्ण से पूर्ण का जन्म होता है और पूर्ण से पूर्ण को घटाने पर पूर्ण ही शेष बचता है. दूसरी यह कि उपनिषद के पहले श्लोक के बाद ही उपनिषदकार ॐ शांतिः शांतिः शांतिः का प्रयोग करता है, जो प्रायः परंपरागत रूप से ग्रंथ के अंत में किया जाता है. पहली बात को लिया जाए तो यह घोषणा गणित के किसी विद्धान अथवा विज्ञान के किसी विद्यार्थी को कभी हज़म ही नहीं होगी, क्योंकि उसका ज्ञान तो अंकों में ही सीमित है. वह तो यही कहेगा कि 100 में 100 निकाल देने पर 100 नहीं, शून्य शेष बचता है. परंतु, उपनिषदकार यहां पर पूर्ण की बात कर रहा है. पहले यह सोचना होगा कि क्या 100 पूर्ण है? तो उत्तर होगा नहीं. तो फिर पूर्ण कौन है? उत्तर स्पष्ट है-पूर्ण है परमेश्वर, पूर्ण है समुद्र, पूर्ण है मां और पूर्ण है गुरु ! परमेश्वर ने अपनी इच्छाशक्ति अथवा अपने भीतर से ही सारी सृष्टि को उत्पन्न किया, परंतु वह पूर्ण ही बना रहा. समुद्र से कितना भी जल निकाल लो, परंतु उसकी पूर्णता एक समान ही रहती है. मां कितने ही बच्चों को जन्म क्यों न दे दे, उसकी पूर्णता में अंतर नहीं आता और गुरु अपने ज्ञान के प्रकाश से कितने ही विद्यार्थियों के जीवन का अंधकार दूर क्यों न कर दे, उसका ज्ञान आलोकित ही रहता है. उपनिषदकार जो दूसरी आश्चर्यजनक बात कह रहा है, वह प्रारंभ में ही अंत है. क्रमानुसार पहले ही श्लोक के बाद वह तीन बार प्रणव के साथ शांति शब्द का प्रयोग करके संभवतः यही कहना चाहता है कि यदि तुमने इस पहले श्लोक का अर्थ भलीभांति समझ लिया है तो तुम्हारी शिक्षा पूर्ण हुई. अब तुम्हें आगे पढ़ने की आवश्यकता ही नहीं है. जो अंत में करने वाले हो, वह यहीं कर लो. साई बाबा भी पूर्ण परात्परब्रह्म हैं. वह प्रतिदिन अपने लाखों-करोड़ों भक्तों पर कृपा की वर्षा करते हैं, परंतु उनकी दया और कृपा का अक्षय भंडार पूर्ण ही बना रहता है. ॐ साईराम.

श्री सद्‌गुरु साई बाबा के ग्यारह वचन

1. जो शिरडी आएगा, आपद दूर भगाएगा.
2. चढ़े समाधि की सीढ़ी पर, पैर तले दुख की पीढ़ी पर.
3. त्याग शरीर चला जाऊंगा, भक्त हेतु दौड़ा आऊंगा.
4. मन में रखना दृढ़ विश्वास, करे समाधि पूरी आस.
5. मुझे सदा जीवित ही जानो, अनुभव करो, सत्य पहचानो.
6. मेरी शरण आ खाली जाए, हो कोई तो मुझे बताए.
7. जैसा भाव रहा जिस मन का, वैसा रूप हुआ मेरे मन का.
8. भार तुम्हारा मुझ पर होगा, वचन न मेरा झूठा होगा.
9. आ सहायता लो भरपूर, जो मांगा वह नहीं है दूर.
10. मुझ में लीन वचन मन काया, उसका ऋण न कभी चुकाया.
11. धन्य धन्य व भक्त अनन्य, मेरी शरण तज जिसे न अन्य.

हमारी भक्ति

साई बाबा के जीवन एवं सच्चरित्र और आपकी अपनी भक्ति से संबंधित किसी एक विषय पर यहां परिचर्चा की जाएगी तथा श्रेष्ठ विचार भेजने वाले साई भक्त के विचार यहां प्रकाशित किए जाएंगे.

पिछले सप्ताह का विषय:

क्या साई बाबा आडंबरों के विरोधी थे?

आपके जवाब:

1. आड्बर, पाखंड और दिखावे के साई बाबा घोर-घोर विरोधी थे. वह धर्म के बंधनों में जकड़ने के बजाय समाज को विभिन्न धर्मों की महानतम शिक्षा से दीक्षित करना चाहते थे. एक बार उन्होंने श्रीमद्‌भागवत गीता के श्लोक का जिस प्रकार अर्थ समझाया, उससे स्पष्ट है कि बाबा धर्मों के बंधन से समाज को मुक्त कराना चाहते थे.

- ***दय जोशी***, मुंबई, महाराष्ट्र (सर्वश्रेष्ठ विचार)

2. साई बाबा केवल आडंबरों के ही नहीं, हठधर्मिता से जुड़ी भक्ति के भी कट्टर विरोधी थे. वह हमेशा कहा करते थे कि व्रत-उपवास से यदि शरीर को कष्ट पहुंचता है तो उसे करने की आवश्यकता नहीं है. मालिक अपने भक्तों के भूखे रहने से कभी प्रसन्न नहीं होता. वह तो अपने बच्चों को प्रसन्न देखकर ही प्रसन्न होता है.

- ***राजीव अग्रवाल***, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

3. साई बाबा सादा जीवन उच्च विचार का संदेश समाज को देना चाहते थे. उनके भक्त उनकी कृपा पाकर सेठ और धन्नासेठ बन गए, परंतु जीवनपर्यंत बाबा केवल भिक्षा मांगकर और मिल-बांट कर ही रोटी खाते रहे. इससे पता चलता हैं कि साई बाबा आडंबरों के विरोधी थे.

- ***शिखा बंसल***, नई दिल्ली.

इस सप्ताह का विषय:

साई बाबा ने *सबका मालिक एक* क्यों कहा?

आप अपने विचार sai4world@gmail.com पर अपने नाम और पते के साथ मेल करें अथवा *शिरडी साईबाबा फाउंडेशन, पोस्ट बॉक्स नम्बर-17517, मोतीलाल नगर नंबर-1, गोरेगांव (पश्चिम), मुंबई-58* के पते पर डाक द्वारा भेजें.

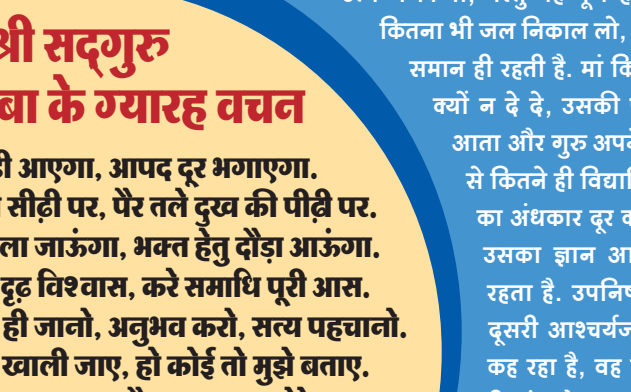

रांची (झारखंड) निवासी राकेश प्रसाद का पूरा परिवार शिरडी के साई बाबा का अनन्य भक्त था. राकेश के बेटे संजय की शादी गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) निवासी विनय कुमार सिन्हा की बेटी वंदना से हुई, लेकिन पहली ही रात संजय को पता चला कि अपने माता-पिता के दबाव और लोकलाज के कारण वंदना ने संजय से शादी की है. शादी के बहुत पहले से ही वंदना विशाल नामक एक लड़के से प्यार करती थी, लेकिन दूसरी जाति और ग़रीब होने के कारण वंदना के पिता विनय ने उस रिश्ते को ठुकरा दिया. सब कुछ जानने के बाद संजय ने बिना अपने माता-पिता को कुछ बताए साई बाबा की शपथ लेकर फ़ैसला किया कि वंदना उसके पास विशाल की अमानत है और विशाल के मिलने पर वह उसकी अमानत उसे सौंप देगा. काफ़ी खोजबीन के बाद आख़िर संजय ने विशाल को खोजकर वंदना को उससे मिलवा दिया, लेकिन विशाल ने वंदना को स्वीकार करने के बजाए ख़ुद को दूसरों की जूठन न खाने वाला बता कर ठुकरा दिया. इस आघात को सहने की शक्ति वंदना में नहीं थी. उसके दोनों जहां बर्बाद हो चुके थे. संजय को वह अपना पति नहीं, देवता मानने लगी थी. अब अपने देवता को अपना मुंह दिखाने की ताक़त भी उसमें नहीं थी. इसलिए उसने विशाल के नाम एक पत्र लिखकर आत्महत्या कर ली. अभी संजय से उसकी शादी हुए कुल पांच महीने बीते थे, इसलिए विनय कुमार एवं पुलिस को प्रथमदृष्टया यह मामला दहेज हत्या का नज़र आया. पुलिस ने संजय को गिरफ़्तार भी कर लिया. ख़ुद को बेगुनाह बताने का कोई प्रमाण संजय और उसके परिवार वालों के पास नहीं था. अदालत में वंदना के प्यार की बात बताकर संजय उसे बदनाम नहीं करना चाहता था. निचली अदालत ने संजय, राकेश प्रसाद और उसकी मां को दोषी मानते हुए सज़ा सुना दी, लेकिन राकेश प्रसाद की श्रद्धा साई बाबा पर थी. उन्हीं की कृपा से निचली अदालत ने उन्हें अपर कोर्ट में अपील करने की इजाज़त दे दी. तीनों ज़मानत पर रिहा हुए और साई बाबा के दर्शन करने शिरडी गए. उन्होंने बाबा से प्रार्थना की कि जो गुनाह उन्होंने किया ही नहीं, उसकी सज़ा उन्हें क्यों दी जा रही है. भक्तों की सच्ची प्रार्थना से बाबा का सिंहासन डोल गया. अपर कोर्ट में लंबी ज़िरह के बाद जिस दिन फ़ैसला सुनाया जाना था, उससे एक दिन पहले बाबा ने मृत वंदना का वेश धारण किया और विशाल के सामने पहुंच कर उसे चौंका दिया. वंदना बने बाबा से प्रेरणा पाकर विशाल ने कोर्ट में उपस्थित होकर संजय और उसके परिवार वालों को निर्दोष बताते हुए वंदना द्वारा लिखा गया उसका अंतिम पत्र प्रस्तुत कर दिया. उस पत्र से साफ़ हो गया कि वंदना की आत्महत्या परिस्थितिजन्य थी. उसमें न तो संजय का दोष था और न ही विशाल का. अदालत ने दोनों को बाइज़्ज़त बरी करके स्थितियों को आत्महत्या का कारण मानकर मामला बंद करा दिया.

(साईभक्तों की सच्ची कहानियां से साभार)

शिरडी साई बाबा फाउंडेशन (रजि.)

अनंत कोटि ब्रह्मांड के नायक राजाधिराज योगीराज परब्रह्म शिरडीपुरीश्वर साई नाथ महाराज के सिद्धांतों, शिक्षाओं, जनचेतना और जनजागरण के कार्यक्रमों को जन-जन तक पहुंचाने के लिए शिरडी साई फाउंडेशन कृत संकल्प है. यदि आप भी इस महायज्ञ में अपने सत्कर्मों की आहुति डालना चाहते हैं तो साई भक्त परिवार में आपका सहर्ष स्वागत है.

नाम..........

पता..........

टेलीफोन..........मोबाईल..........

ई-मेल..........

हस्ताक्षर

सदस्य बनने के लिए अपना पूरा विवरण निम्न पते पर अपने ड्राफ्ट के साथ भेजें

हमारा पता है:-

शिरडी साई बाबा फाउंडेशन पोस्ट बॉक्स नंबर-17517, मोती लाल नगर नंबर-1, गोरेगांव (पश्चिम), मुंबई-58

आप अपना नाम, पता और फोन नंबर 09999989427 पर एसएमएस भी कर सकते हैं

सभी साई भक्तों को विनम्रता से सूचित किया जाता है कि वे अपने साई अनुभव, साई उत्सवों आदि की विस्तृत सूचना (कार्यक्रम, प्रबंधक, तिथि, स्थान और समय सहित) विकास कपूर को sai4world@gmail.com पर मेल कर सकते हैं.

कुंभ हो और साधु-संन्यासियों में विवाद न हो, यह असंभव है. यही पहले के कुंभों का इतिहास रहा है कि ये महा आयोजन साधु-संन्यासियों के विवादों के चलते चर्चित रहते आए हैं. इतिहास ऐसी अनेक घटनाओं का साक्षी है.

साहित्यिक कृतियों के लिए शुभ संकेत

अनंत विजय

विदेशों में साहित्यिक कृतियों पर कई फ़िल्में बनीं और उन्होंने ऑस्कर से लेकर कई अन्य पुरस्कार जीतने के अलावा ख़ूब लोकप्रियता भी हासिल की. नोबेल पुरस्कार प्राप्त एलफ्रेड येलनिक की कृति पियानो टीचर पर बनी फ़िल्म हो या फिर अभी हाल में ही दिवंगत एरिक सीगल के उपन्यास लव स्टोरी पर इसी नाम से बनी फ़िल्म, सभी ने पश्चिम में ख़ासी धूम मचाई थी. फ़िल्मों के अलावा पश्चिम के देशों में साहित्यिक कृतियों पर टेलीविज़न सीरियल भी ख़ूब बने और दर्शकों द्वारा सराहे गए, लेकिन भारत में इस प्रवृत्ति के आने में ख़ासी देरी हुई. सार्थक सिनेमा के दौर में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के लेखकों की कई कृतियों पर फ़िल्में तो बनीं, चर्चित भी हुईं, लेकिन व्यवसायिक रूप से कमलेश्वर की ही कुछ फ़िल्में हिट हुईं. सत्यजित राय से लेकर वासु चटर्जी तक ने भारतीय लेखकों की कृतियों पर फ़िल्में बनाईं. कला फ़िल्मों के दौर में राजेंद्र यादव, कमलेश्वर, राजेंद्र सिंह बेदी समेत हिंदी के कई लेखकों की कृतियों पर फ़िल्मों का निर्माण हुआ. उसके बाद शिवमूर्ति, प्रियंवद की कहानियों पर भी फ़िल्में बनीं. कुछ दिनों पहले हिंदी के बेहद चर्चित एवं प्रतिभाशाली लेखक उदय प्रकाश की कृति मोहनदास पर उसी नाम से फ़िल्म बनी, जिसकी ख़ासी प्रशंसा भी हुई. शाहरुख़ ख़ान की फ़िल्म पहेली राजस्थान के लेखक विजयदान देथा की एक लोक कहानी पर आधारित है.

अभी हाल ही में रिलीज़ हुई और सफलता के पिछले सारे रिकॉर्ड ध्वस्त करने वाली फ़िल्म थ्री इडियट्स भारत के ही अंग्रेजी लेखक चेतन भगत के 2004 में लिखे गए हिट उपन्यास *फाइव प्वाइंट समवन–व्हाट नॉट टू डू एट आईआईटी* पर आधारित है. भारतीय फ़िल्म इंडस्ट्री से प्रेरणा लेकर मनोरंजन चैनलों के निर्माताओं ने भी छिटपुट तौर पर साहित्यिक कृतियों पर टेलीविज़न सीरियल बनाए. दूरदर्शन ने ज़रूर कई बार कोशिशें की. कई लेखकों की कहानियों पर टेली सीरियल बने. प्रेमचंद की कहानियों पर धारावाहिक का निर्माण हुआ. लेकिन निजी मनोरंजन चैनल ने साहित्यिक कृतियों को उतनी प्रमुखता नहीं दी. पिछले कई सालों तक तो भारत के मनोरंजन चैनलों पर पारिवारिक मेलोड्रामा को प्रमुखता मिलती रही. स्टार प्लस पर चलने वाले सीरियल *सास भी कभी बहू थी* और *कसौटी ज़िंदगी की* सफलता के बाद मनोरंजन चैनलों के कर्ताधर्ताओं को लगा कि यह सफलता का गारंटेड फ़ॉर्मूला है. और, फिर जैसा कि हर क्षेत्र में होता है कि सफल फ़ॉर्मूले को अपनाकर लोग उसे सफलता की शॉर्टकट कुंजी मान लेते हैं तथा लाभ कमाने में जुट जाते हैं. मनोरंजन चैनल के निर्माता भी इसी प्रवृत्ति के शिकार हो गए. नतीजा यह हुआ कि सभी मनोरंजन चैनलों पर सास–बहू टाइप सीरियल्स की भरमार हो गई. स्टार प्लस की सफलता के इस फ़ॉर्मूले को कलर्स पर नए कांसेप्ट के आधार पर शुरू हुए धारावाहिकों ने ध्वस्त किया. अब मनोरंजन चैनलों पर स्थानीय बोली–बानी और अलग–अलग राज्यों की समस्याओं को केंद्र में रखकर धारावाहिक चल ही नहीं रहे, बल्कि दर्शकों को बेहद पसंद भी आ रहे हैं. चाहे वह कलर्स पर चलने वाला *भाग्यविधाता* और *न आना इस देस मेरी लाडो* हो या फिर ज़ी टीवी पर *अगले जनम मोहे बिटिया ही कीजो*.

लेकिन हाल के दिनों में मनोरंजन की दुनिया में नए उभरते ट्रेंड पर ग़ौर करें तो यह लगता है कि टेलीविज़न सीरियल के निर्माताओं का ध्यान भारतीय भाषाओं में लिखी जा रही कृतियों की ओर गया है और वे उन पर सीरियल बना चुके हैं या फिर बनाने की योजनाओं पर गंभीरता से काम कर रहे हैं.

सब टीवी पर चलने वाले तीन टीवी सीरियल भारतीय लेखकों की कृतियों पर आधारित हैं. हिंदी के मशहूर व्यंग्य लेखक शरद जोशी की कृतियों पर आधारित सीरियल लापतागंज दर्शकों को ख़ूब भा रहा है. इसी तरह सब चैनल पर ही चलने वाला सीरियल तारक मेहता का उल्टा चश्मा भी पत्रकार–लेखक तारक मेहता की किताब– *दुनिया दा उंधा चश्मा* पर आधारित है. इसके अलावा गुजराती उपन्यास रेतपंखी पर आधारित सीरियल बंदिनी एनडीटीवी इमेजिन पर जारी है. स्टार प्लस पर चलने वाला सीरियल *सजन घर जाना* है बांग्ला के प्रसिद्ध उपन्यासकार बंकिम चंद्र चटर्जी के मशहूर उपन्यास देवी चौधरानी पर बना है. टेलीविज़न निर्माताओं का ध्यान हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के अलावा भारतीय अंग्रेजी लेखन पर गया है, जो बेहद शुभ संकेत है. अद्वैत काला के पहले ही उपन्यास ऑल मोस्ट सिंगल से प्रेरित होकर यशराज फ़िल्म्स ने सोनी टीवी के लिए *माही वे* बनाया.

सास–बहू की कहानियों के दिन लदने और स्थानीय समस्याओं एवं बोली–बानी में बन रहे सीरियल्स की भीड़ के बीच कई निर्माता अब नए कांसेप्ट एवं कहानी के लिए देसी लेखन की ओर देखने लगे हैं. यह प्रवृत्ति भारतीय लेखकों और लेखन के लिए बेहद उत्साहजनक संकेत है. क्योंकि, हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में सैकड़ों ऐसी कृतियां हैं, जिन पर अगर फ़िल्म या सीरियल बनें तो एक ही तरह के फ़ॉर्मूले पर बन रहे सीरियल्स से ऊब चुके दर्शकों को ताज़गी मिलेगी. साथ ही निर्माताओं की झोली भी भर जाएगी.

(लेखक आईबीएन7 से जुड़े हैं)

feedback@chauthiduniya.com

पुस्तक अंश मुन्नी मोबाइल

गतांक से आगे

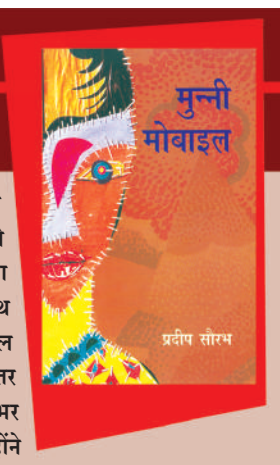

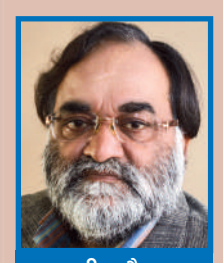

प्रदीप सौरभ

दंगों के दौरान ही आनंद भारती का शिमला के बाद दूसरी बार नरेंद्र मोदी से आमना–सामना अहमदाबाद के सर्किट हाउस में हुआ. मौक़ा था प्रेस कांफ्रेंस का. मोदी ने हाल में घुसने के बाद जब पत्रकारों पर नज़र दौड़ाई तो उनकी आंखें आनंद भारती पर टिक गईं.

बोले, आप यहां कैसे? शिमला छोड़ आए क्या?

आपके कर्म मुझे यहां ले आए, आनंद भारती बोले. वे बोलना तो यह चाहते थे कि आपके कुकर्म मुझे गुजरात ले आए. अनौपचारिक बात होती तो शायद आनंद भारती यह कह भी देते.

आनंद भारती के इस जवाब के बाद माहौल संजीदा हो गया. नरेंद्र मोदी अपनी रौ में बोले और अपनी बात रखकर चलते बने. उन्होंने दंगों के बाबत कोई भी सीधा जवाब नहीं दिया. अप्रत्यक्ष रूप से वे दंगाइयों के पक्ष में ही दिखे. उन्होंने यह तक कह दिया कि क्रिया की प्रतिक्रिया तो होती है. एक बार तो ऐसा लगा कि उनके अंदर महान वैज्ञानिक न्यूटन की आत्मा प्रवेश कर गई हो. दंगों को उन्होंने विज्ञान की भाषा में बताया.

दंगों से बेघर हुए लोगों का राहत शिविरों में आना जारी था. अकेले अहमदाबाद के शिविर में साठ हज़ार से अधिक दंगा पीड़ित रह रहे थे. शाहआलम की मजार परिसर में गुजरात का सबसे बड़ा राहत शिविर बनाया गया था. इस शिविर में तेरह हज़ार से भी ज़्यादा पीड़ित रह रहे थे. शाहआलम शिविर नेताओं के आने–जाने का तीर्थस्थल बना हुआ था. यह शिविर घनी मुस्लिम आबादी में था.

आनंद भारती जब पहली बार इस शिविर में पहुंचे तो चीख–चिल्लाहट ने उनके कान के पर्दे फाड़ दिए. शाहआलम के दृश्य कड़वी सच्चाई थे. वे किसी हॉरर फ़िल्म के दृश्य नहीं थे. ये सब धर्म के नाम पर गांधी की जन्मस्थली गुजरात में सताए गए लोग थे. मारा तो मारा. काटा तो काटा. जलाया तो तड़पने न दिया. गुजरात के दंगों पर बनने वाली डॉक्यूमेंट्री की स्क्रिप्ट इस शिविर में कहीं से भी शुरू की जा सकती थी.

दास्तान सबकी एक जैसी है. कायराना और क्रूरतम. अमानवीय और शर्मनाक.

खालिद नूर मोहम्मद. निवासी नरोडा पाटिया, अहमदाबाद. परिवार में ग्यारह सदस्य. उस सुबह खालिद अपना रोज का काम शुरू करने वाले थे. अचानक रामनाम का जाप करती उग्र भीड़ ने उन पर हमला बोल दिया. जान बचाने को सब भागे–दौड़े. दंगाइयों ने एक–एक को पकड़ कर जलाना शुरू कर दिया. दंगाइयों के हाथ में पेट्रोल–डीज़ल और मशाल सब कुछ था. यह बताते हुए सत्तर वर्षीय खालिद की आंखें भर आती हैं. वे बताते हैं कि उन्होंने अपनी आंखों से सबको जलते देखा. उनकी बेटी कौसर को पहला बच्चा पैदा होने वाला था. दंगाइयों ने उसके पेट से बच्चा निकाल कर आग में फेंक दिया. बाद में उसे भी ज़िंदा जला दिया. उनकी बीवी, जवान बेटा, बहू सब जला दिए गए. अब वे अपने जीने पर शर्मिंदा हैं. कहते हैं, अब मैं जीऊं तो किसके लिए जीऊं. मेरे लिए जीना–मरना सब एक समान है.

अपने अकेले ज़िंदा बचे बारह वर्षीय बेटे इस्माइल की ओर इशारा करते हुए कहते हैं, वह मां को लाने की ज़िद करता है. मैं उसे मां को कहां से लाकर दूं. बूढ़े की बेबसी आनंद भारती को झिंझोड़ देती है.

अगले अंक में जारी

feedback@chauthiduniya.com

क्या कुंभ और विवाद सगे रिश्तेदार हैं?

डॉ.कमलकांत बुधकर

श्री पंचदशनाम जूना भैरव अखाड़े के एक महामंडलेश्वर स्वामी यतींद्रानंद गिरि अख़बारों की सुर्ख़ियों में हैं. वह हरिद्वार संसदीय सीट से भारतीय जनता पार्टी के हारे हुए प्रत्याशी हैं. वह इन दिनों संतई से अधिक राजनीति में रुचि रखते हैं. अख़बारों में उनका एक बयान छपा है कि कुंभ में अखाड़ों के शाही स्नानों के बाद वह एक दिन दलित समाज के साधुओं को भी शाही स्नान करवाने हरकी पौड़ी ले जाएंगे. इतना ही नहीं, उनका यह भी कथन प्रकाशित हुआ है कि वह राष्ट्रवादी मुस्लिमों को गंगातट पर ले जाकर गंगापूजन कराएंगे और वंदे मातरम गवाएंगे. अपने महामंडलेश्वर के इस बयान पर अखाड़ा समाज भौचक है. अखाड़ा परिषद के अध्यक्ष बैरागी महंत ज्ञानदास एवं महामंत्री संन्यासी श्री महंत हरि गिरि बेहद खफ़ा हैं. महंत हरि गिरि तो इसलिए भी नाराज़ हैं कि यह विवादित बयानबाज़ी उन्हीं के अखाड़े के महामंडलेश्वर की ओर से हुई है. उन्होंने कहा है कि साधु–संतों के बीच जाति की बात करना अनुचित है. साधु की कोई जाति नहीं होती. सभी जातियों के लोग साधु–संन्यासी बनने के बाद जातिहीन और वर्णहीन हो जाते हैं. ऐसे में किसी साधु को वर्ण–वर्ग के झगड़ों में नहीं पड़ना चाहिए.

उधर स्वामी यतींद्रानंद अख़बारों से नाराज़ हैं कि उन्होंने जो कहा ही नहीं, वह छाप दिया गया है. उनका कहना है कि उन्होंने दलित संतों की नहीं, बल्कि दलित समाज की बात कही है. उनके गुरुदेव स्वामी सत्यमित्रानंद गिरि भी उज्जैन कुंभ में शाही स्नानों के बाद सफाईकर्मियों के साथ जाकर गंगा नहाए थे. अगर हरिद्वार में भी दलित समाज के साथ साधु–संत नहाएंगे तो समाज में समरसता का संदेश जाएगा. जहां तक मुस्लिम समाज द्वारा गंगा पूजन कराने का प्रश्न है, तो वह भी हरकी पौड़ी पर नहीं, बल्कि अन्यत्र कराया जाएगा. यह भी एक अनुकरणीय संदेश देगा समाज को. यह और बात है कि यतींद्रानंद गिरि के इस बयान में लोग राजनीति भी सूंघ रहे हैं. अब इस बयान की मंशा पर न भी जाएं तो भी स्वामी यतींद्रानंद और अखाड़ा परिषद के इन परस्पर विरोधी बयानों से एक नया विवाद तो पैदा हो ही गया है.

कुंभ हो और साधु–संन्यासियों में विवाद न हो, यह असंभव है. यही पहले के कुंभों का इतिहास रहा है कि ये महा आयोजन साधु–संन्यासियों के विवादों के चलते चर्चित रहते आए हैं. इतिहास ऐसी अनेक घटनाओं का साक्षी है. साक्षी वह ऐसी घटनाओं का भी है, जब क़हर बनकर कुंभ आम जनता पर भी टूटा. पर जनता आपस में लड़ी हो, ऐसे उदाहरण नहीं के बराबर हैं. लेकिन साधु–संन्यासियों के छोटे–बड़े विवादों के बग़ैर कोई कुंभ शायद ही संपन्न हुआ हो. अजीब लगता है, पर सच यही है कि विश्व भर को शांति का संदेश देने वाले हमारे ये अखाड़े अपना यही नाम अधिक सार्थक करते दिखते हैं.

यही वजह है कि जनमानस में अनेक प्रश्न इस महापर्व को लेकर घुमड़ते हैं. कुंभ स्नान पर क्या सिर्फ़ साधु–संतों का एकाधिकार है? कुंभ स्नान और कुंभ पर्व के संपूर्ण आयोजन को लेकर क्या सारा ध्यान सिर्फ़ साधु–संतों एवं उनके तेरह अखाड़ों पर ही दिया जाना चाहिए? क्या अखाड़ों के अलावा कोई कहीं साधु नहीं होता है? अखाड़ों के कुछ साधु निर्वस्त्र होकर गंगा स्नान क्यों करते हैं? साधुओं के बीच स्नानक्रम को लेकर झगड़े क्यों होते हैं? फ़कीरों के इस शाही स्नान का क्या औचित्य है, जो देश से राजशाही समाप्त होने के बाद भी जारी है? ऐसे ढेर सारे प्रश्न हैं, जो समाज में कुंभचर्चा होने पर यत्र–तत्र पूछे जाते हैं. इनके उत्तर में सामान्यत: कह दिया जाता है कि यह परंपरा है, ऐसा ही होता आया है. अब इस उत्तर से कोई संतुष्ट हो या न हो, इसकी चिंता किसी को नहीं है. आस्था का प्रश्न कहकर आम आस्तिक इस पर बहस भी नहीं करना चाहता, क्योंकि उसे तो सिर्फ़ अपने पुण्य और मोक्ष की चिंता है. कुंभकाल में गंगा धारा में लगाई गई एक डुबकी उसके सारे पाप दूर करके उसके मोक्ष का कारण बनेगी, यह बात हर उस आस्तिक भारतीय के मन में गहरे पैठी और बैठी है, जो सैकड़ों मील दूर से यात्रा के सारे कष्ट झेलता हुआ कुंभनगरी में पहुंचता है.

चर्चा कुंभनगर की

फोटो : *प्रभात पाण्डेय*

यहां आकर वह आम आदमी एक ओर महंतों और मंडलेश्वरों के वैभव की झांकियां देखकर चकित, मुग्ध और विभोर हो जाता है तो दूसरी ओर साधु–संन्यासियों को निर्वस्त्र देखकर उनकी कथित विरक्ति को प्रणाम भी करता चलता है. दस प्रतिशत लोगों के मन में अगर प्रश्न उभरते भी हैं, तो भी वे भक्ति के ज्वार में बह जाते हैं. सब पर हावी हो जाता है आम लोगों का यही विस्मय, यही मुग्धावस्था, यही वैभोर्य और यही प्रणामांजलियां, जो कुंभ को प्रश्नों से परे की दिव्यता और भव्यता प्रदान करती हैं. सारे उत्तरित एवं अनुत्तरित प्रश्न अपनी धार खो बैठते हैं और शेष रह जाते हैं केवल श्रद्धा एवं समर्पण. मुझे कई बार लगता है कि कुंभ के नाम पर जो कुछ और जैसा कुछ हो रहा है, उस पर प्रश्नाकुल होने की जगह उसका आनंद लेना चाहिए. चारों ओर पसरती भक्ति और आस्था पर विराट भावुकता को छा जाने देना चाहिए. पर क्या करें, भीतर बैठी बौद्धिकता कुलबुलाने लगती है. ग़रीब जनता का करोड़ों–अरबों रुपया गंगा की धारा की तरह बहते देखकर कष्ट होता है. लोकविश्वास के इस महापर्व का हमारे राजनीतिक दल एवं उसके राजनेता, सरकारी अफ़सर, उनका अमला एवं उनके मुंहलगे ठेकेदार किस तरह केवल अपने स्वार्थ और हितसिद्धि के लिए उपयोग कर रहे हैं, यह देखना चिंता भी जगाता है और क्षोभ भी.

जिस कुंभ स्नान के लिए सरकार पांच से छह करोड़ लोगों के आने की आस लगाए बैठी है और जिसकी व्यवस्थाओं पर पांच सौ पैंसठ करोड़ रुपयों का अभूतपूर्व ख़र्चा किया जा रहा है, उसी कुंभ स्नान के लिए एक–डेढ़ लाख साधु–संन्यासियों से अधिक शायद ही आ पाएंगे. ऐसे में स्नानार्थी जनता का ही बाहुल्य मुख्य स्नान दिवसों में रहने वाला है. लेकिन, उनके लिए बनाई गईं घटिया सड़कें, बिजली–पानी की नित्य प्रति बाधित हो जाने वाली आपूर्ति व्यवस्थाएं, आम दिनों में भी स्थानीय निवासियों के लिए यातायात की असुविधाएं और आने वाले मेहमानों के हरकी पौड़ी तक पहुंचने के मार्ग में रुकावट देखकर तो ऐसा नहीं लगता कि मेले में आम आदमी को सुविधाएं मिलने वाली हैं. दरअसल सुविधाएं देने के नाम पर जो कुछ मिला है, वह साधु समाज और उनके अखाड़ों को ही अधिक मिला है. सरकारी अमला उन पर और उन्हीं के आश्रमों, अखाड़ों एवं डेरों पर ख़र्चा करके अपने कर्तव्य की इतिश्री मान रहा है.

महाशिवरात्रि को कुंभ का पहला शाही स्नान है. पंचदशनाम जूना भैरव अखाड़ा सहित सातों संन्यासी अखाड़े शहर के बीचोबीच से शोभायात्रा के साथ हरकी पौड़ी पर गंगा स्नान के लिए जाएंगे. जूना अखाड़े के पीछे अग्नि एवं आवाहन अखाड़े, फिर निरंजनी एवं आनंद अखाड़े और अंत में महानिर्वाणी एवं अटल अखाड़े हरिद्वार नगर के भीतरी मुख्य मार्ग अपर रोड से होकर हरकी पौड़ी पहुंचेंगे. जूना, अग्नि और आवाहन जब स्नान करके ब्रह्मकुंड हरकी पौड़ी के घाट ख़ाली कर देंगे, तब निरंजनी और आनंद अखाड़े घाट पर पहुंचेंगे. इसी तरह जब ये अखाड़े नहाकर लौट आएंगे, तब आख़िरी दो अखाड़े घाट पर जाएंगे. महाशिवरात्रि के दिन प्राय: सुबह से शाम तक हरकी पौड़ी आम स्नानार्थियों के लिए बंद रहेगी. जब साधु–संन्यासी वहां होंगे, तब आम जनता उनकी सिर्फ़ दर्शनार्थी हो सकती है, सह–स्नानार्थी नहीं. हां, जनता के लिए मालवीय द्वीप और हरिद्वार के शेष गंगाघाट अलबत्ता खुले रहेंगे.

सभी लोग, सारा कुंभ प्रशासन और उत्तराखंड सरकार यही प्रार्थना कर रहे हैं कि महाशिवरात्रि का शाही स्नान सकुशल निबट जाए और फिर सब 15 मार्च के दूसरे शाही स्नान की तैयारी में जुटें. 15 मार्च का स्नान अधिक चुनौतियों वाला है, क्योंकि उस दिन केवल शाही स्नान नहीं, बल्कि वह चुनौती भरी सोमवती अमावस्या भी है, जो बड़ी संख्या में स्नानार्थियों को हरिद्वार में जुटाती है.

kk@budhkar.in

एसर एसएचबीजी के भारत प्रमुख रिचर्ड टैन ने कहा कि लिक्विड सीरीज़ फोन किसी भी प्रोसेसिंग के स्पीड को स्टाइल के साथ बढ़ाता है.

सेलिना जेटली मिस्र पर्यटन की नई ब्रांड एम्बेसडर

मिस्र पर्यटन प्राधिकरण और मिस्र अरब गणराज्य ने भारत को अपने पर्यटन बाज़ार का अहम हिस्सा मानते हुए यहां अपना नया विज्ञापन कैंपेन एवं प्रतीक चिह्न यानी लोगो पेश किया. इस प्रतीक चिह्न में फाराओ की प्राचीन और अनूठी दुनिया को जीवंत दिखाया गया है. इस मौक़े पर मिस्र पर्यटन प्राधिकरण ने अभिनेत्री सेलिना जेटली को ब्रांड एम्बेसडर घोषित किया. एक आर्मी परिवार की चौथी पीढ़ी की बाला सेलिना हमेशा से अपने पूर्वजों की तरह देश की सेवा करना चाहती थीं. इजिप्ट के साथ जुड़कर वह देश के सांस्कृतिक संबंध मज़बूत करने का काम कर रही हैं.

भारत और मिस्र की समानताओं का ज़िक्र करते हुए वह कहती हैं कि धरोहरों के रूप में दोनों देशों ने दुनिया को बहुत कुछ दिया है. मिस्र की जनता भारतीय लोगों की बहुत इज़्ज़त करती है, उन्हें ख़ास तव्ज्जो देती है. मिस्र की नील नदी के किनारे खड़े होने पर ऐसा लगता है, जैसे हम अतीत में चले गए हों. भारतीयों के लिए वहां के पुरातन बाज़ार में बहुत सारी चीजें मिलती हैं. मिस्र का खाना जैसे मोलखा आदि भारतीयों को बेहद पसंद आ सकता है. इसके अलावा मिस्र में कला–संस्कृति, पारंपरिक विरासत, इतिहास के साथ–साथ आपको खेलकूद एवं मनोरंजन के कई साधन मिलेंगे. इस मौक़े पर भारत में मिश्र के राजदूत डॉ. मोहम्मद हिगाजी ने कहा कि भारत और मिस्र के बीच सांस्कृतिक संबंधों का ऐतिहासिक महत्व रहा है. नए कैंपेन, लोगो और स्लोगन की व्याख्या करते हुए मिस्र पर्यटन प्राधिकरण के निदेशक अदेल एल मासरी ने कहा कि यह मिस्र की सभ्यता का परिचय देने के साथ–साथ एक पर्यटन केंद्र के रूप में नए अनुभव, व्यक्तिगत प्रेरणा और अविश्वसनीय कहानियां सुनने–सुनाने के केंद्र के रूप में भी उभर रहा है.

एडेल मेसरी और डॉ. एच ई हिगेजी के साथ सेलिना जेटली

नए स्लोगन– *मिस्र, जहां से दुनिया की शुरुआत* हुई से मिस्र के ऐतिहासिक महत्व का पता चलता है. कैंपेन में पर्यटकों को मिस्र जाने पर मिलने वाली ख़ास चीजों के बारे में ज़िक्र किया गया है, जिनमें दुर्लभ पक्षियों, राज़–रहस्यों और आधुनिकता को शामिल किया गया है. समुद्री पर्यटन, वाटर स्पोर्ट्स, विंडसर्फिंग, ड्राइविंग, स्पा, प्राकृतिक नदियों में चिकित्सकीय एवं अन्य उपचार, सफ़ेद और सुनहरी रेत पर मरुभूमि पर्यटन, गोल्फ के साथ खेलकूद पर्यटन, एमआईसीई और व्यवसायिक पर्यटन, दुनिया की सबसे लंबी नदी नील में जहाज पर विवाह और हनीमून आदि मिस्र पर्यटन के ख़ास आकर्षण हैं. इस पर्यटन कैंपेन में मध्यमवर्गीय परिवारों के लिए कई पैकेज उपलब्ध हैं.

सॉलिड फोन की लिक्विड सीरीज

मोबाइल फोन की दुनिया में ग्राहकों को लुभाने के लिए कंपनियों द्वारा आए दिन नए प्रयोग हो रहे हैं. इसी होड़ में आगे बढ़कर हिस्सा लिया गैजेट्स के क्षेत्र में अपना पैर जमा चुकी कंपनी एसर ने. एसर स्मार्ट हैंडहेल्ड बिजनेस समूह ने अपने स्मार्ट फोन की लिक्विड सीरीज़ लांच की है. विश्व के पहले क्वालकॉम स्नैपड्रैगन प्रोसेसर पर आधारित इस सीरीज़ में एंड्रायड 1.6 हाई डेफिनेशन स्मार्ट फोन हैं. बिल्कुल नए लुक के साथ इस स्मार्ट फोन में अत्याधुनिक सॉफ्टवेयर तकनीक के साथ अल्ट्रा फ्लूड इंटरफेस है. इसके अलावा मल्टी मीडिया, वेब ब्राउज़िंग, सोशल मीडिया एवं वीडियो स्ट्रीमिंग जैसे फ़ीचर्स इस स्मार्ट फोन को ख़ास बनाते हैं. एसर एसएचबीजी के भारत प्रमुख रिचर्ड टैन ने कहा कि लिक्विड सीरीज़ फोन किसी भी प्रोसेसिंग की स्पीड को स्टाइल के साथ बढ़ाता है. लाल, सफ़ेद और काले रंग के शेड में एलिप्स कर्व्ज में लिक्विड स्टाइल मोबाइल फोन लवर्स के लिए बेहतरीन स्मार्ट फोन है. लिक्विड एंड्रायड 1.6 ऑपरेटिंग सिस्टम में यह फोन पहला हाई डेफिनेशन क्षमता वाला वाइड वीजीए स्मार्ट फोन है.

इससे फोटो एवं वीडियो काफ़ी साफ़ और बड़ा दिखता है. इस एंड्रायड स्मार्ट फोन हैंडहेल्ड में कई एप्लीकेशन जैसे गेम्स, प्रोफेशनल एप्लीकेशंस और वेब एप्पलेट्स हैं, जो यूजर्स को ख़ुश करते हैं. इसमें वेब पेज अपलोड होने में वक़्त नहीं लगता और मल्टी मीडिया का शानदार कंटेंट मिलता है. इसमें आप थ्री डी ग्राफिक्स का प्रयोग आसानी से कर सकते हैं. इसमें बेहतर पावर वाली बैट्री, जियो टैगिंग, आईएसओ, सेल्फ टाइमर और ऑटो फोकस वाला कैमरा है. वर्ल्ड वाइड म्यूजिक एवं वीडियो की स्ट्रीमिंग के लिए इसमें ख़ास स्पिनलेट्स एप्लीकेशन भी है. फेसबुक, ट्विटर, यू–ट्यूब, पिकासा एवं फ्लिक से एकीकरण और कंटेंट अपडेट का नोटिफिकेशन उसी वक़्त मिल जाता है, जैसे ही कोई आपको मैसेज करता है. कंपनी ने इस एसर लिक्विड स्मार्ट फोन की क़ीमत 24,900 रुपये तय की है.

टीवी पर नियंत्रण का यंत्र

मौजूदा दौर में टेलीविजन घर के सदस्य की भांति रोल अदा करता है. टीवी और उसके कार्यक्रमों के बिना कई घरों में वीरानी सी छाई रहती है. देश के कई राज्यों में अपनी सेवाएं उपलब्ध कराने वाला आईपीटीवी अब नए अंदाज़ में मनोरंजक कार्यक्रम आप तक पहुंचाएगा. उसने एमटीएनएल और अक्ष ऑप्टी फाइबर की मदद से आई कंट्रोल सर्विस लांच की है.

इस आई कंट्रोल सर्विस में दर्शकों का टेलीविजन पर पूरा नियंत्रण रहेगा. नए चैनल पार्टनर के साथ जुड़ने की वजह से इसमें 125 मनोरंजन चैनल दिखाए जाएंगे. वीडियो ऑन डिमांड फ़ीचर से बॉलीवुड, हॉलीवुड एवं प्रादेशिक भाषाओं के 600 से अधिक वीडियो दर्शकों के लिए उपलब्ध होंगे, जिनमें लगभग 35 प्रतिशत बिल्कुल मुफ़्त होंगे. इस सर्विस के ख़ास चिल एंड कूल फ़ीचर के माध्यम से दर्शक पिछले सात दिनों में किसी वजह से छूट गए कार्यक्रम सुविधानुसार कभी भी देख सकते हैं.

इसके अलावा लाइव चैनलों को रिवाइंड, पॉज़ एवं फारवर्ड करने की सुविधा भी दी गई है. अक्ष ऑप्टी फाइबर की आईपीटीवी सेवा आई कंट्रोल सामान्य टेलीविजन सेवाओं से अलग एक इंटेरेक्टिव सेवा है, जो ब्रॉडबैंड की सहायता से चलती है. इसकी सर्विस ग्राहकों को एमटीएनएल द्वारा मिलेगी, चाहे वह कंप्यूटर में हो या टीवी में. इस आई कंट्रोल में आई का मतलब इंटरेक्शन से है, जो देश में फ़िलहाल किसी भी डीटीएच या कैस जैसे दूसरे सेवा प्रदाताओं द्वारा उपलब्ध कराई जा रही टेलीविजन सेवाओं में नहीं दी गई है. इस आईपीटीवी आई कंट्रोल में यूज़र्स को तत्काल मैसेज भेजने और प्राप्त करने की सुविधा दी गई है. इसके अलावा इसमें व्यक्तिगत एड्रेस बुक और बच्चों के मनोरंजन के लिए इंटेरेक्टिव गेम्स दिए गए हैं. महिलाओं के लिए शॉपिंग प्लेटफॉर्म आई–मॉल फ़ीचर है. इस यंत्र का एक ख़ास फ़ीचर ए–ट्यूब कम बजट वाले विज्ञापनदाताओं के लिए वीडियो क्लासीफाइड का पुल फॉर्मेट है. आम लोगों तक बेहतर पहुंच के लिए आईपीटीवी आई कंट्रोल की इंस्टॉलेशन क़ीमत 1999 रुपये है और मनोरंजक चैनलों के पैकेज़ 199/249/299 रुपये पर उपलब्ध है.

ओरिफ्लेम का पावर ऑफ किस

बच्चों के साथ मशहूर फैशन डिजाइनर रोहित बल

रिन केयर, टॉयलेटरीज, सुगंध (फ्रैगरेंस) एवं कलर कॉस्मेटिक्स बनाने वाली स्वीडन की कंपनी ओरिफ्लेम ने बाल कल्याण की दिशा में सक्रिय ग़ैर–सरकारी संगठन दीपालय के साथ मिलकर भारत में लड़कियों के विकास और कल्याण के लिए पावर ऑफ किस नामक एक नई पहल शुरू की है. वर्ल्ड चाइल्डहुड फाउंडेशन की सह–संस्थापक कंपनी ओरिफ्लेम के प्रबंध निदेशक फ्रेडरिक विडेल इस क़दम को अपनी सामाजिक ज़िम्मेदारी मानते हैं. मशहूर डिज़ायनर रोहित बल अभियान के गुडविल एंबेसडर बने हैं. अभियान का लक्ष्य भारत में बालिकाओं की स्थिति सुधारने के लिए एक कोष जुटाना है. इसमें मदद करने केलिए ओरिफ्लेम इंडिया ने अपनी हर लिपस्टिक की बिक्री में से दो रुपये दान करने का फ़ैसला किया है. दान के वक़्त कंपनी संस्थापकों जोनास अफ जॉकनिक एवं रॉबर्ड अफ जॉकनिक के चैरिटी फाउंडेशन की ओर से दानराशि दोगुनी कर दी जाएगी. ओरिफ्लेम इंडिया के एमडी विडेल ने कहा कि बच्चियों की शिक्षा में किया जाने वाला कोई भी निवेश सीधे तौर पर परिवार के बेहतर स्वास्थ्य और आर्थिक स्थिति को मज़बूत बनाने में मदद करता है. इसलिए *पावर ऑफ किस* अभियान के ज़रिए कंपनी के सलाहकार उपभोक्ताओं को इस महान सामाजिक उद्देश्य हेतु दिल खोलकर योगदान करने की गुज़ारिश कर रहे हैं. डिज़ायनर रोहित बल ने कहा कि उन्हें इस ब्रांड और भारत की ओर से इस पवित्र उद्देश्य को दिए जा रहे समर्थन पर विश्वास है. संस्था दीपालय को ओरिफ्लेम गर्ल चाइल्ड योजना के लिए 4 करोड़ रुपये की अनुदान राशि दी गई है. इस राशि का उपयोग 4 से 17 वर्ष आयु की लड़कियों को शिक्षा दिलाने के लिए किया जाना है.

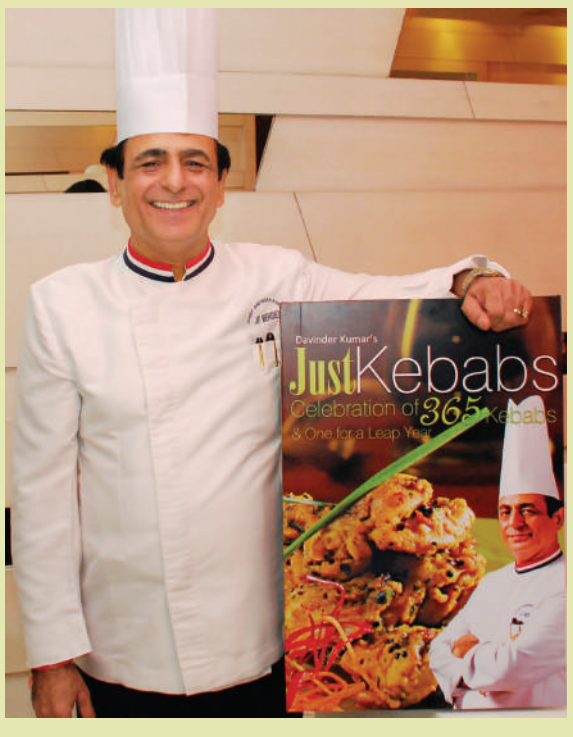

तरह-तरह के कबाब

मध्यमवर्गीय परिवारों में शाही व्यंजनों के स्वाद का लुत्फ उठाने के लिए होटलों तक जाना आज भी तीज–त्योहारों के मौक़ों तक ही सीमित है. काश, शाही व्यंजन घर पर ही तैयार हो जाएं तो कितना अच्छा हो. अब तक तो आपके मुंह में पानी आने लगा होगा. पर अब सिर्फ़ मुंह में पानी नहीं कबाब भी आएगा. अब ऐसा संभव है. अब शाही व्यंजनों के लिए होटलों पर निर्भर रहने की कोई ज़रूरत नहीं है. बस, अपने घर की शेफ को ख़ुश कर दीजिए. कैसे? कुछ ख़ास नहीं, बस एक अदद किताब भेंट कर.

शाही व्यंजन घर पर ही तैयार हो जाएं तो कितना अच्छा हो. लेकिन अब ऐसा संभव है. शाही व्यंजनों के लिए होटल को ऑर्डर करने की कोई ज़रूरत नहीं है. बस, अपने घर की शेफ को ख़ुश कर दीजिए. कैसे? कुछ ख़ास नहीं, बस एक अदद किताब भेंट कर.

जी हां, पांच सितारा होटल ली मेरीडियन के शेफ देविंदर कुमार ने घर के छोटे–छोटे शुभ अवसरों जैसे जन्मदिन, शादी की सालगिरह, टी–पार्टी या किटी पार्टी आदि के लिए नई कुकरी बुक जस्ट कबाब लिखी है, जिसमें 365 क़िस्म के कबाब की विधियां बताई गई हैं. इस किताब की मदद से घर में बने शाही व्यंजनों का स्वाद और बढ़ जाएगा.

अब अगर घर में मेहमानों को वीकेंड में आना हो तो किसी बड़ होटले में कबाब का ऑर्डर देने का काम ख़त्म. क्योंकि अब इस किताब के ज़रिए जी भर के कबाब बनाइए. जब जिस मेहमान को जिस फ्लेवर का कबाब पसंद हो, उसी फ्लेवर का कबाब घर बैठे बनाइए. वे दिन गए, जब कबाब को भारत में मुगलों के आगमन से जोड़कर देखा जाता था और कबाब का उत्पति स्थल काकेशस के पहाड़ों को माना जाता था, जहां लोग भाले–बर्छी से शिकार करके मांस से कबाब बनाया करते थे. आज ज़माना बदल चुका है. जस्ट कबाब एक ऐसी किताब है, जो मुगलकालीन कबाबों को आपकी प्लेट तक ले आएगी. इसमें शाकाहारी लोगों के लिए भी 127 तरह के वेजीटेरियन कबाब व्यंजन बताए गए हैं.

किताब में कबाब बनाने में प्रयोग होने वाली सामग्री की विस्तृत सूची के साथ–साथ रसोई में पहली बार अपने हाथ आज़माने वालों के लिए भी कई टिप्स दिए गए हैं. जस्ट कबाब में मुगलकालीन और समकालीन दोनों फ्लेवर के कबाब व्यंजनों को शामिल किया गया है. शुभी पब्लिकेशन द्वारा प्रकाशित इस किताब की मदद से आप 365 क़िस्म के कबाब बना सकते हैं. किताब के लेखक देविंदर कुमार कहते हैं कि उम्दा पाककला का राज़ सही समय पर सही सामग्री डालना है. उसके बाद आप स्वादिष्ट कबाब का मज़ा ले सकते हैं

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

दिल्ली, 15 फरवरी-21 फरवरी 2010

www.chauthiduniya.com

रण में उतरे राहुल

सरोज सिंह

बिहार विधानसभा चुनाव होने में अभी देरी है, लेकिन राजनीतिक बिसात बिछने लगी है . दांव-पेंच का खेल शुरू हो गया. कांग्रेस ने बिहार में अकेले चुनाव लड़ने का फ़ैसला किया है. इसलिए स्वयं राहुल चुनावी दंगल में उतर गए हैं. चुनाव के परिणाम क्या होंगे, यह तो कहा नहीं जा सकता, लेकिन इतना ज़रूर है कि राहुल के आने से पूरा बिहार कांग्रेसमय हो गया. उन्होंने कार्यकर्ताओं में जोश भर दिया.

चुनावी साल में आख़िरकार कांग्रेस ने अपने सबसे बड़े योद्धा राहुल गांधी को बिहार के रणक्षेत्र में उतार ही दिया. लंबे इंतजार के बाद पूरे तामझाम के साथ आए राहुल गांधी दो दिनों तक पार्टी कार्यकर्ताओं और नेताओं का हौसला बढ़ाने के साथ-साथ अपने राजनीतिक विरोधियों को ललकारते रहे. पटना, गया, भागलपुर, किशनगंज, दरभंगा, चंपारण और डालमिया नगर में उन्होंने जहां युवाओं का मन टटोला, वहीं आम जनता को यह संदेश देने की कोशिश की कि बिहार में बड़े बदलाव की ज़रूरत है. राज्य में अकेले चुनाव लड़ने की घोषणा कर राहुल ने लालू प्रसाद और रामविलास को झटका तो दिया, पर नीतीश की नीयत को सही बताकर कई तरह की संभावनाओं और चर्चाओं को भी जन्म दे दिया.

महात्मा गांधी की कर्मभूमि चंपारण स्थित भितिहरवा आश्रम से बाहर निकलते ही राहुल गांधी ने बिना हिचक अपने राजनीतिक एजेंडे का ख़ुलासा कर दिया. राज्य में अकेले चुनाव लड़ने की घोषणा करके उन्होंने कांग्रेसियों ख़ासकर युवा कार्यकर्ताओं और नेताओं को पार्टी को गांव-गांव तक ले जाने का टास्क दिया. राहुल ने कहा कि बिहार में कांग्रेस इसलिए पिछड़ी, क्योंकि हम जनता से कट गए. लेकिन अब कांग्रेस को जनता से जोड़ने का काम करना है और इस काम में मेरा पूरा सहयोग रहेगा. राहुल का यह मंत्र उन नेताओं के लिए संदेश था, जो पटना में बैठकर एक-दूसरे की टांग खींचने में अपना पूरा समय बर्बाद कर रहे हैं. राहुल का दूसरा तीर भी ऐसे नेताओं के लिए ही समर्पित था. उन्होंने कहा कि अब नेता ऊपर से नहीं थोपा जाएगा, बल्कि कार्यकर्ता ही अपना नेता चुनेंगे. हमेशा दिल्ली दौड़ लगाने वाले नेताओं के लिए यह चेतावनी थी, तो समर्पित नेताओं के लिए हौसलाआफजाई. पूरे राज्य में दुविधा और द्वंद्व में फंसे कार्यकर्ताओं एवं नेताओं को राहुल ने यह कहकर संजीवनी दे दी कि आप मन बनाइए, बिहार में कोई चुनौती नहीं है.

अपने दो दिनों के दौरे में राहुल गांधी ने कांग्रेस के परंपरागत मतदाताओं को फिर से पार्टी से जोड़ने के लिए कहीं खुलकर तो कहीं इशारों ही इशारों में बहुत सारी बातें कहीं. मुसलमानों एवं दलितों को उन्होंने भरोसा दिलाया कि कांग्रेस का हाथ हमेशा उनके साथ है. पिछड़ों को रिझाने के लिए उन्होंने कहा कि केंद्र सरकार ने राज्य के लिए खजाना खोल दिया है, लेकिन नीतीश सरकार योजनाओं को ज़मीन पर उतारने में पूरी तरह असफल साबित हुई है. राहुल गांधी ने दिल्ली, असम और आंध्र सरकार का उदाहरण देते हुए यह समझाने का प्रयास किया कि केंद्र की कांग्रेस सरकार द्वारा बनाई गई योजनाओं को इन राज्य सरकारों ने ज़मीन पर उतार कर गरीबों की किस्मत बदल दी. मगर, बिहार इसमें पिछड़ गया. पिछले बीस सालों से यह राज्य विकास की आस लगाए बैठा है, लेकिन इसका चेहरा नहीं बदला. इसलिए यहां बड़े बदलाव की ज़रूरत है और आप लोग कांग्रेस का साथ देकर ऐसा कर सकते हैं. राहुल का यह तीर अगर निशाने पर लगा तो इससे राज्य के तीनों दिग्गज नीतीश, लालू और रामविलास पासवान को नुक़सान पहुंच सकता है. मुसलमान, दलित और पिछड़ी जातियों के मतदाताओं पर इन तीनों नेताओं की ख़ासी पकड़ रही है. इन्हीं मतदाताओं की ताक़त से बिहार में सरकारें बनती हैं और गिरती हैं. इसलिए भले ही ये तीनों नेता खुलकर कुछ न बोलें, पर अंदरखाने डैमेज कंट्रोल की कवायद तेज़ कर दी गई है. लालू प्रसाद घूम-घूमकर मुसलमानों को समझा रहे हैं कि कांग्रेस की सरकार सच्चर कमेटी और रंगनाथ मिश्र कमीशन की सिफारिशें लागू नहीं करना चाह रही है. कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन के तहत लालू मुसलमानों को यह समझाने का प्रयास कर रहे हैं कि बाबरी मस्जिद को तोड़ने में कांग्रेस ने संघ का साथ दिया. रामविलास पासवान दलितों की बस्तियों में घूमते हुए नज़र आ रहे हैं. नीतीश कुमार ने महादलितों और पिछड़ों के सम्मेलनों का सिलसिला तेज़ कर दिया है. ये नेता अच्छी तरह जानते हैं कि अगर मुसलमान, पिछड़े और दलित वोटों की बादशाहत उनके हाथों से छिन गई तो सारे राजनीतिक समीकरण बिगड़ जाएंगे और कांग्रेस इसका फ़ायदा उठा ले जाएगी. उम्मीद की जा रही है आने वाले दिनों में इस वोट बैंक पर क़ब्ज़े की लड़ाई और भी तेज़ हो जाएगी.

अगड़ी जातियों पर भी कांग्रेस की पैनी नज़र है और जल्द ही पार्टी इसके लिए तैयार की गई रणनीति पर काम शुरू कर देगी. इन दो दिनों में राहुल का पूरा ज़ोर युवा शक्ति को पार्टी की ताक़त बनाने पर रहा. युवाओं में राहुल का क्रेज यहां साफ़ दिखा भी. राहुल जहां भी गए, युवाओं की भीड़ उनका इंतजार करती दिखी. राहुल ने उन्हें निराश भी नहीं किया. वह युवाओं से खुलकर मिले, उनसे सवाल-जवाब किए और उन्हें राजनीति में आने का न्योता दिया. बिहारी स्वाभिमान की बात उठाकर राहुल ने बिहारियों के दिलों में जगह बनाने की कोशिश की. उन्होंने कहा कि मुंबई में अगर बिहारियों का अपमान हुआ तो मैं चुप नहीं बैठूंगा. राहुल ने बिहारी प्रतिभा का गुणगान किया और कहा कि आप तो भारत और दुनिया चला रहे हैं तो बिहार को भी चलाइए. इस तरह की बातों से राहुल ने यह बताने का प्रयास किया कि वह बिहार एवं बिहारियों का दर्द अच्छी तरह समझते हैं और अगर कांग्रेस को मौक़ा मिला तो बिहार विकास की दौड़ में सबसे आगे नज़र आएगा.

राजनीतिक एजेंडे के साथ राहुल बिहार आएं, लेकिन नीतीश सरकार पर हमला न हो, यह संभव नहीं था. इसलिए राजधानी पटना में ही राहुल ने दो टूक कहा कि कल्याणकारी योजनाओं को ज़मीन पर उतारने में नीतीश कुमार सफल नहीं हो पाए. वह राज्य में नए स्कूल और अस्पताल नहीं खोल पाए तथा कोसी के बाढ़ पीड़ितों को मदद नहीं मिल सकी. राहुल ने साफ़ कहा कि बिहार का चेहरा नहीं बदला, इसलिए यहां बड़े बदलाव की ज़रूरत है. जाहिर है, कांग्रेस ने नीतीश के ख़िलाफ़ राजनीतिक लाइन तय कर दी, लेकिन राहुल ने यह कहकर कई चर्चाओं और संभावनाओं को जन्म दे दिया कि नीतीश की नीयत ठीक है. रामविलास पासवान ने कहा कि मैं राहुल के इस बयान से सहमत नहीं हूं. नीतीश कुमार की न नीयत ठीक है और न ही नीति. बताया जाता है कि जदयू में उठे तूफान और केंद्र की राजनीति के मद्देनजर कांग्रेस कोई एक दरवाजा खुला रखना चाहती है. ममता बनर्जी और शरद पवार के तेवरों से अगर नुक़सान की आशंका नज़र आई तो इस दरवाजे को खटखटाने की संभावना पर विचार किया जा सकता है.

राहुल गांधी ने तो दो दिनों में ही बिहार में अपना प्रारंभिक काम कर दिया. पूरा सूबा राहुल के रंग में रंगा नज़र आया. जिस मक़सद से राहुल को चुनावी समर में उतारा गया था, वह कामयाब रहा. बिहार की जनता खासकर युवाओं की नब्ज टटोल कर राहुल तो दिल्ली चले गए, पर प्रदेश के नेताओं के सिर पर चुनौतियों का पहाड़ रख गए. दो गुटों में बंटी बिहार कांग्रेस दो दिनों तक तो एक दिखी, पर राहुल के जाने के बाद एक दिखना मुश्किल ही लग रहा है. राहुल के दौरे को सफल बनाने का ताज अपने माथे पर रखने की होड़ मच गई है. अनिल शर्मा को लेकर नाराज नेताओं की तल्खी कम होने के आसार कम हैं. संगठन को सही मायनों में मज़बूत बनाने की कवायद अब अगर तेज़ नहीं की गई तो राहुल के दौरे से मिले लाभ को पार्टी जल्द ही गंवा देगी. लालू, नीतीश, पासवान एवं सुशील मोदी की पूरी कोशिश होगी कि राज्य में कांग्रेस की राजनीतिक ज़मीन का दायरा ज़्यादा न बढ़ पाए. राहुल फिर बिहार आने का वायदा कर गए हैं, पर बिहार कांग्रेस का विवाद अगर जारी रहा और राहुल के दिए मंत्र को कांग्रेसजन अमल में नहीं ला सके तो चुनावी रणक्षेत्र में पार्टी की विजय पताका फहराने पर प्रश्नचिन्ह लग जाएगा.

वैसे चुनाव के परिणाम क्या होंगे, ये तो आने वाला समय ही बताएगा, लेकिन इतना ज़रूर है कि राहुल के आने से पूरा बिहार कांग्रेसमय हो गया.

feedback@chauthiduniya.com

मिलों द्वारा बाहरी क्रय केंद्रों और मिलों में आपूर्ति किए गए गन्ने के मूल्य में भारी अंतर किया जाता है. जबकि यह अंतर अधिक दूरी होने पर मामूली होता है.

औषधि निर्माण में प्रयोग होने वाला मसुकदाना कभी खराब नहीं होता. एक कट्ठा ज़मीन में क़रीब दस किलो मसुकदाना तैयार होता है और इस प्रकार एक बीघा ज़मीन में दो सौ किलो उपज प्राप्त हो जाती है.

औरंगाबाद : टिकट को लेकर घमासान के आसार

बिहार विधानसभा चुनाव होने में अभी वक़्त है, लेकिन राजनीतिक दलों की तैयारियों से औरंगाबाद में ऐसा लग रहा है, जैसे चुनाव सिर पर है. सभी राजनीतिक दल चुनाव की तैयारी ज़ोरशोर से कर रहे हैं. एक ओर कांग्रेस का संगठन चुनाव और युवक कांग्रेस का सदस्यता अभियान चल रहा है, वहीं राजद-लोजपा गठबंधन अपने आंदोलन से राज्य सरकार को उखाड़ फेंकने पर आमादा नज़र आ रहा है. दोनों विपक्षी दलों की राजनीतिक गतिविधियों में टिकटार्थी नेताओं की ज़्यादा भागीदारी नज़र आ रही है. लगता है, एक अनार-सौ बीमार वाली स्थिति उत्पन्न होने वाली है. ज़िले के सभी छह विधानसभा क्षेत्रों की ओर यदि नज़र दौड़ाएं तो सभी प्रमुख दलों में टिकटार्थी नेता अपनी गोटी फिट करने की कोशिश में लगे हुए हैं.

जहां तक गठबंधनों की बात है तो राज्य की स्थिति के अनुरूप यहां भी एक ओर भाजपा-जदयू तो दूसरी ओर राजद-लोजपा गठबंधन है. तीसरी ओर कांग्रेस एकला चलो रे की नीति पर चुनाव मैदान में उतरेगी. जदयू-भाजपा में गठबंधन की स्थिति पिछली बार जैसी ही बनती नज़र आ रही है. इस स्थिति में भाजपा के ख़ाते में औरंगाबाद की ही सीट आएगी, जबकि अन्य पांच सीटें जदयू की झोली में जाएंगी. यही बात राजद-लोजपा गठबंधन के मामले में भी लागू होती नज़र आ रही है. लोजपा के ख़ाते में उसके कब्ज़े वाली नबीनगर की सीट ही आएगी, जबकि अन्य सीटों पर राजद के उम्मीदवार मैदान में होंगे. कांग्रेस की स्थिति कुछ अलग है. इस बार पार्टी का हर कार्यकर्ता उत्साहित है और वह अकेले दम पर सभी सीटों पर चुनाव लड़ने का आकांक्षी है. यही कारण है कि राजद एवं कांग्रेस में टिकटार्थियों की संख्या कुछ ज़्यादा है. सीटों पर नज़र दौड़ाने की शुरुआत अनुसूचित जाति के लिए सुरक्षित कुटुंबा विधानसभा क्षेत्र से करते हैं. वर्तमान में यह सीट जदयू के कब्ज़े में है. यहां से **रेणु देवी** प्रतिनिधित्व कर रही हैं. हालांकि बहुत अच्छी स्थिति न होने के बावजूद सेटिंग-गेटिंग के आधार पर उनका टिकट पक्का लगता है, लेकिन उन्हें दरकिनार कर अरविंद पासवान एवं रामचंद्र चौधरी जैसे नेता भी यहां से टिकट के दावेदार हैं. रामचंद्र चौधरी विधानसभा अध्यक्ष उदय नारायण चौधरी के क़रीबी रिश्तेदार हैं. लिहाज़ा टिकट मिलने का उन्हें पूरा भरोसा है, जबकि इसी सीट से कांग्रेस के राजेश राम अपने पिता स्वर्गीय दिलकेश्वर राम (पूर्व स्वास्थ्य मंत्री) की विरासत संभालने के इरादे से टिकट के आकांक्षी हैं. उन्हें वरिष्ठ नेताओं का समर्थन हासिल है, लेकिन अक्षय पासवान, डॉ. रामनंदन चौधरी एवं श्याम राम जैसे नेता भी इस सीट से कांग्रेस की ओर से टिकट की दावेदारी करने में पीछे नहीं हैं.

रेणु देवी

विजय कुमार सिंह

नबीनगर सीट अभी लोजपा के कब्ज़े में है और **विजय कुमार सिंह** उर्फ़ डब्लू सिंह को ज़िले का इकलौता पार्टी विधायक होने का गौरव हासिल है. इस स्थिति में राजद के साथ तालमेल में यह सीट सेटिंग-गेटिंग के आधार पर लोजपा के ख़ाते में होगी. इसके अलावा पार्टी को ज़िले की कोई और सीट मिलने की उम्मीद नज़र नहीं आ रही है. यहां से पिछली बार जदयू प्रत्याशी सुशील कुमार सिंह को पराजय का मुंह देखना पड़ा था, लेकिन वह औरंगाबाद से सांसद हैं. इस नाते जदयू उम्मीदवार के तौर पर उनकी पसंद का ख्याल ज़रूर रखा जाएगा. उनके पसंदीदा उम्मीदवार के रूप में सुनील कुमार यादव का नाम चर्चा में है. जहां तक कांग्रेस की बात है तो इस सीट से फिलहाल श्याम बिहारी सिंह का नाम चर्चा में है. ओबरा की सीट अभी राजद के **सत्य नारायण यादव** के कब्ज़े में है और उनका टिकट पक्का माना जा रहा है. लेकिन, एक पूर्व केंद्रीय मंत्री के सहयोग से राम नरेश सिंह एवं दिलीप यादव ख़ुद टिकट हथियाने की फ़िराक़ में हैं. कांग्रेस की ओर से अरविंद शर्मा एवं किरण शर्मा का नाम हवा में तैर रहा है. दोनों में से किसी को भी टिकट मिल सकता है. पिछली बार दूसरे स्थान पर रहे जदयू के प्रमोद चंद्रवंशी इस बार भी टिकट के लिए प्रयासरत हैं. वैसे इस सीट से जदयू के व्यवसायिक प्रकोष्ठ के प्रदेश उपाध्यक्ष शंभु प्रसाद टिकट के आकांक्षी हैं, लेकिन उनकी दिल्ली दूर लग रही है. इस सीट से दो बार विधायक रहे और दो बार पराजय का सामना कर चुके भाकपा(माले) के राजाराम सिंह भी चुनाव मैदान में होंगे. तालमेल में यह सीट राजद के ख़ाते में जाने की प्रबल संभावना के बावजूद पिछली बार लोजपा के टिकट पर चुनाव लड़ चुके अभिमन्यु शर्मा भी टिकट की लाइन में खड़े नज़र आ रहे हैं.

सत्यनारायण सिंह

संतोष यादव

गोह क्षेत्र से डॉ. रणविजय कुमार विधायक हैं, जो चुनाव जीतने के एक साल बाद से ही एक मामले में अब तक जेल में हैं. इस स्थिति में पार्टी किसी और को टिकट दे सकती है, लेकिन फ़िलहाल किसी नए नाम की चर्चा नहीं है. कांग्रेस से इस बार कौकब कादरी का टिकट तय माना जा रहा है, जबकि राजद में **संतोष यादव**, कौलेश्वर यादव एवं राम अयोध्या यादव टिकट के लिए ज़ोर आज़माइश कर रहे हैं. रफीगंज सीट राजद के डॉ. नेहालुद्दीन के कब्ज़े में है. उनका टिकट लगभग पक्का है. इस सीट से जदयू के उम्मीदवार के रूप में दूसरी पार्टी से आए अशोक कुमार सिंह द्वारा दावेदारी जताई जा रही है. जबकि कांग्रेस से **डॉ. विजय कुमार सिंह** चुनाव लड़ने के आकांक्षी बताए जा रहे हैं. सबसे ज़्यादा घमासान औरंगाबाद सीट पर होने के आसार हैं. यह सीट वर्तमान में भाजपा के रामाधार सिंह के कब्ज़े में है और उन्हें टिकट मिलना तय है. यहां से कांग्रेस के ज़िलाध्यक्ष यमुना सिंह भी चुनाव लड़ने के आकांक्षी हैं, लेकिन यहां पूर्व सांसद श्यामा सिंह का नाम भी हवा में तैर रहा है. राजद में भी सबसे ज़्यादा मारामारी औरंगाबाद सीट को लेकर है. यहां एक अनार-सौ बीमार की तर्ज़ पर पूर्व विधायक सुरेश मेहता, **रवींद्र सिंह**, सेठ विनय प्रसाद, पूर्व ज़िला परिषद अध्यक्ष राघवेंद्र प्रताप, बैजनाथ मेहता एवं पूर्व विधान पार्षद **डॉ. शंकर दयाल सिंह** चुनावी टिकट के लिए मैराथन दौड़ में शामिल हैं. लेकिन, टिकट उसे ही मिलेगा, जो लालू प्रसाद की पसंद बन पाएगा.

रविंद्र सिंह

शंकरदयाल सिंह

अजय कुमार
feedback@chauthidunia.com

सराय की महफ़िलों में छा गया अंधेरा

कभी दिन ढलते ही तवलों की थाप और घुंघरुओं की खनक से गूंजने वाला सराय का वह इलाक़ा आज शांत पड़ा है. गया के बीचोबीच बसे सराय मुहल्ले की पहचान अब धूमिल पड़ गई है. यहां की गलियों में कभी फिटिन पर सवार रईसों, नवाबों और राजा-रजवाड़ों की लाइन लगी रहती थी. लेकिन अब न वे रईस हैं, न रक्कासा और न ही कहीं वह पुरानी रौनक़ ही दिखाई देती है. नज़्म और नज़ाकत के क़द्रदान भी अब कहीं नज़र नहीं आते. समय बदला तो सूरत बदली और फिर सोच भी बदल गई. आज सराय को शहर की बदनाम बस्ती के तौर पर जाना जाता है. तवायफ़ों की जगह वेश्याओं ने ले ली है. आज जिस्मफ़रोशी का धंधा यहां खुलेआम चलता है. नए-पुराने मकान और उन मकानों की बालकनी एवं झरोखों से वे हर आने-जाने वालों की ओर उम्मीद भरी नज़रों से देखती हैं. हर शख़्स उन्हें अपने जिस्म का ख़रीदार लगता है, जिससे चंद पैसे मिलने की उम्मीद जगती है. इस उम्मीद में वे मुस्कराती हैं, लोगों को रिझाती हैं. संभव है, उनकी मुस्कान से लोग रीझ भी जाते हों, लेकिन, जब आप उनके चेहरे के पीछे छिपे दर्द को जानेंगे तो आपके क़दमों तले ज़मीन सरकती सी महसूस होगी.

सराय मोहल्ला का एक दृश्य.

समय बदला तो सूरत बदली और फिर सोच भी बदल गई. आज सराय को शहर की बदनाम बस्ती के तौर पर जाना जाता है. तवायफ़ों की जगह वेश्याओं ने ले ली है. आज जिस्मफ़रोशी का धंधा यहां खुलेआम चलता है. नए-पुराने मकान और उन मकानों की बालकनी एवं झरोख़ों से वे हर आने-जाने वालों की ओर उम्मीद भरी नज़रों से देखती हैं.

गया के इस सराय मुहल्ले का अपना एक इतिहास और गौरवशाली अतीत है. बताया जाता है कि वर्ष 1587 से 1594 के बीच राजा मान सिंह ने इस इलाक़े की बुनियाद डाली थी और अपने सिपहसालारों के मनोरंजन के लिए यहां तवायफ़ों को बसाया था. कभी यहां नृत्य, गीत और संगीत की शानदार महफ़िलें सजा करती थीं. तब सराय की गिनती शहर के ख़ास मोहल्लों में की जाती थी. सुर और सौंदर्य की सरिता में सराबोर होने शौक़ीन रईसजादे यहां अपनी शामें बिताने आया करते थे. सूरज ढलते ही यहां की फ़िज़ां में बेला और गुलाब की ख़ुशबू तैरने लगती थी. लेकिन बदलते वक़्त के साथ यहां की रौनक़ अतीत की गर्द में दफ़न हो गई. सराय आज देह की मंडी में बदल गया है. कभी रईस घरानों के लड़के यहां के कोठों पर तहज़ीब और अदब सीखने आते थे. लेकिन, अब यहां सिर्फ़ और सिर्फ़ हवस मिटाने वालों की ही भीड़ उमड़ती है.

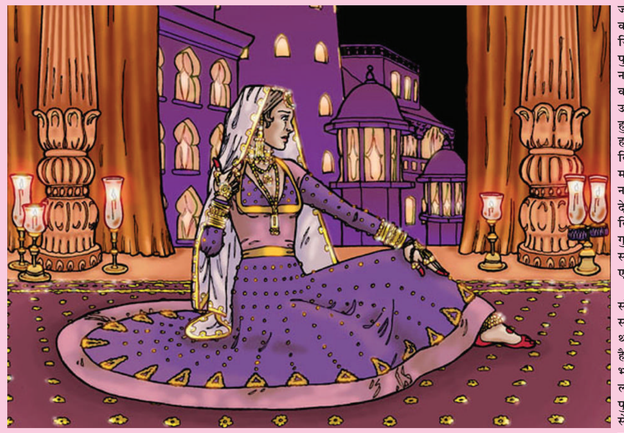

यह वही सराय मोहल्ला है, जहां प्रसिद्ध अभिनेत्री नरगिस की मां जद्दन बाई, छप्पन छुरी एवं सिद्धेश्वरी बाई जैसी उम्दा कलाकारों की महफ़िलें सजा करती थीं. इसी शहर में जद्दन बाई ने नरगिस को जन्म दिया था. कला के प्रति जब यहां उपेक्षा का भाव देखने को मिला तो वह मुंबई चली गईं. अस्सी वर्षीय सिद्धेश्वरी बाई कहती हैं कि अब यहां के कोठों पर तहज़ीब और कला के क़द्रदान नहीं, बल्कि शरीर पर नज़र रखने वाले ही अधिक आते हैं. आज़ादी मिलने के पहले और उसके बाद के कुछ वर्षों तक सराय में नृत्य एवं संगीत की स्वस्थ परंपरा जीवित थी और क़द्रदान भी बरक़रार थे, लेकिन बाद में धीरे-धीरे इस जगह का नाम देह व्यापार के अड्डों में शामिल हो गया.

हालांकि सराय की कई तवायफ़ों ने शादी-विवाह एवं अन्य अवसरों के माध्यम से अपनी पुरानी परंपरा क़ायम रखने की भरसक कोशिश की, लेकिन रईसों, नवाबों, ज़मींदारों और बाहबलियों ने उन्हें रखैल बनने पर मजबूर कर दिया. बीसवीं सदी के आते-आते नक्सलियों के फरमान के कारण शादी-विवाह और बारात में जाने की परंपरा भी ख़त्म हो गई. ज़मींदारी प्रथा के उन्मूलन के बाद रोज़ी-रोटी की चिंता ने तवायफ़ों को मध्यमवर्गीय समाज के बीच लाकर खड़ा कर दिया. नाच-गाने की आड़ में वे देह व्यापार के धंधे में लिप्त हो गईं. गया के रेड लाइट एरिया में आज दो-ढाई सौ लड़कियां-औरतें देह व्यापार के धंधे में मन-बेमन से शामिल हैं. यह बात स्थानीय पुलिस ख़ुद स्वीकार करती है.

सूचना के अधिकार के तहत पुलिस द्वारा मिली जानकारी के अनुसार, यहां के कई कोठों में नृत्य-संगीत की आड़ में जिस्मफ़रोशी का धंधा होता है. पुलिस ने स्वीकार किया कि बहुत सी नर्तकियों के पास नाच-गाना करने का लाइसेंस नहीं है. जिनके पास है, उनका 2005 से नवीनीकरण नहीं हुआ है. इस मोहल्ले के पारो भवन, हारू मियां मंजिल, चंद्रकली भवन, विमला भवन, आबिद मियां के मकान में नर्तकियां रहती हैं, जिनके नाम सुमन, नीता, पूजा, मइया, सोनी देवी, मुन्नी देवी, ललिता देवी, विनीता देवी, बिंदु, रेणु, रेशमा, गुड़िया, रेखा, शीला, रीना, पनीता, सीमा, अर्चना, गीता, नीलम, हस्ना एवं काजल आदि बताए जाते हैं.

देह व्यापार के धंधे में पुलिस की संलिप्तता से भी इंकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह बस्ती कोतवाली थाना से महज़ कुछ ही दूरी पर स्थित है. गया में ऐंटी ह्यूमन ट्रैफिकिंग यूनिट भी सक्रिय है, लेकिन इस धंधे से लड़कियों को निकालने और उन्हें पुनर्वासित कर समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है. पिछले पांच सालों के दौरान यहां कई बार छापामारी की गई, जिनमें कई लड़कियां पकड़ी गईं, लेकिन वे पुलिस को चकमा देकर फ़रार हो गईं. जानकार बताते हैं कि एक संगठित गिरोह बेवस और ग़रीब परिवारों की महिलाओं एवं लड़कियों को बहला-फुसलाकर यहां लाता है और उन्हें देह व्यापार के लिए मजबूर करता है. यहां बंगाल, नेपाल और सीमावर्ती क्षेत्रों से भगा कर लाई गई लड़कियों की संख्या ज़्यादा है. कई बार तो देह व्यापार में लिप्त महिलाएं और लड़कियां पकड़े जाने के बाद ख़ुद सवाल करने लगती हैं कि सभ्य समाज में उन्हें आख़िर कौन स्वीकार करेगा?

सुनील सोरेम
feedback@chauthidunia.com

मसुकदाना की खेती से किसान ख़ुश

टाल क्षेत्र के किसान कल तक कम पैदावार होने और लागत भी न निकल पाने की शिकायत कर रहे थे, लेकिन अब वे परंपरागत खेती को बाय-बाय कहकर नई खेती अपना रहे हैं. मोकामा-टाल के अधिकांश किसान भले ही आज भी क्षेत्र के एक फ़सली और टाल योजना लागू न होने का रोना रो रहे हों, लेकिन यहीं के कुछ किसान औषधीय पट्टति के सहारे सुखमय जीवन की एक नई इबारत लिखने का प्रयास कर रहे हैं. मोकामा के मोर गांव के दर्ज़नों किसान अब औषधीय खेती की उन्नत नस्ल मसुकदाना की खेती कर रहे हैं. नाममात्र लागत पर होने वाली मसुकदाना की खेती किसानों के लिए लाभप्रद साबित हो रही है. हैरानी की बात तो यह है कि मक्का के साथ लगने वाली यह फ़सल मात्र तीन माह में ही तैयार हो जाती है. इसे कोलकाता के कुछ व्यापारी प्रोत्साहित कर रहे हैं. मसुकदाना की खेती कर रहे मोर गांव के प्रगतिशील किसान एवं प्रखंड राजद अध्यक्ष कन्हैया चंद्रवंशी बताते हैं कि फ़सल की लागत नाममात्र है. मसुकदाने के बीज कोलकाता के व्यापारियों द्वारा मात्र पांच सौ रुपये प्रति किलो की दर से उपलब्ध कराए जाते हैं. गौरतलब है कि एक कट्ठा ज़मीन में मात्र सौ ग्राम बीज की खपत होती है. एक बीघा ज़मीन में मात्र 2 किलो बीज लगते हैं और एक हज़ार रुपये का ख़र्च आता है. बुआई के बाद इसमें किसी प्रकार की दवा और रासायनिक खाद की आवश्यकता नहीं पड़ती. मसुकदाना की खेती मक्का की फ़सल के साथ जुलाई-अगस्त माह में होती है. मक्का की बुआई के साथ ही मसुकदाने के बीज बोए जाते हैं. तीन माह के बाद फ़सल तैयार होती है. मसुकदाने के पौधों के बड़े होने पर उसमें फलियां लग आती हैं. शुरू में फलियां हरी-हरी होती हैं. ज्यों-ज्यों फ़सल तैयार होती है, फलियों का रंग भूरा होने-होने लाल हो जाता है. पत्तियां जब सूखने लगती हैं तो जड़ समेत पौधे को उखाड़ कर फलियों को अलग कर लिया जाता है और उन्हें सुखाया जाता है.

हैरानी की बात तो यह है कि मक्का के साथ लगने वाली यह फ़सल मात्र तीन माह में ही तैयार हो जाती है. इसे कोलकाता के कुछ व्यापारी प्रोत्साहित कर रहे हैं. मसुकदाना की खेती कर रहे मोर गांव के प्रगतिशील किसान एवं प्रखंड राजद अध्यक्ष कन्हैया चंद्रवंशी बताते हैं कि फ़सल की लागत नाममात्र है.

आश्चर्यजनक बात तो यह है कि औषधि निर्माण में प्रयोग होने वाला मसुकदाना कभी ख़राब नहीं होता. एक कट्ठा ज़मीन में क़रीब दस किलो मसुकदाना तैयार होता है और इस प्रकार एक बीघा ज़मीन में दो सौ किलो उपज प्राप्त हो जाती है. कोलकाता से आए व्यापारी डेढ़ सौ रुपये प्रति किलो की दर से इसे ख़रीदते हैं. स्पष्ट है कि एक बीघा ज़मीन में क़रीब तीस हज़ार रुपये मूल्य की उपज हो जाती है और इसके विपरीत इसका लागत मूल्य मात्र एक हज़ार रूपए आता है. कन्हैया चंद्रवंशी की मानें तो मोर गांव के दर्ज़नों किसानों ने दो सौ से अधिक बीघा ज़मीन में इसकी खेती कर रखी है. हालांकि अफ़सोस जताते हुए कन्हैया चंद्रवंशी कहते हैं कि बिहार सरकार के कृषि रोड मैप में इस तरह की लाभप्रद खेती का न तो कहीं ज़िक्र है और न ही कृषि अधिकारी-वैज्ञानिक इसे प्रोत्साहित करते हैं. मोकामा बीडीओ राजेश कुमार भी इस खेती के लाभ को सुखद आश्चर्य मानते हैं और कहते हैं कि विभिन्न कृषि प्रशिक्षण शिविरों तथा ग्राम शिविरों के ज़रिए उसे प्रोत्साहित किया जाएगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthidunia.com

सीबीआई जांच से इंकार क्यों?

झारखंड की शिबू सरकार की कुंडली अर्जुन मुंडा एवं मधु कोड़ा की सरकारों से कहीं न कहीं ज़रूर मिलती है. इतना ही नहीं, कई गुण और अवगुण एक जैसे हैं. इसलिए वह आय से अधिक संपत्ति के आरोपों में फंसे पूर्व मंत्रियों के मामलों को निगरानी जांच में ही निपटा देना चाहती है और सीबीआई जांच की ज़रूरत से इंकार करती है. यह जानते हुए भी कि कोड़ा एंड कंपनी का धन विदेशों में भी लगा हुआ है और विदेशों में फैले उसके आर्थिक साम्राज्य की पड़ताल निगरानी विभाग या प्रवर्तन निदेशालय के ज़रिए संभव नहीं है. इसके लिए सीबीआई ही सक्षम एजेंसी हो सकती है. चारा घोटाले का पर्दाफ़ाश होने के बाद लालू प्रसाद ने भी कुछ इसी तरह का मंतव्य दिया था. बाद में हाईकोर्ट के आदेश के बाद सीबीआई जांच करानी पड़ी. इस तरह के बयान घोटाले में सत्ताधारियों की संलिप्तता के संकेत हैं.

भाजपा जब सत्ता के बाहर थी तो उसने भ्रष्टाचार के विरुद्ध राजभवन का घेराव किया था और आय से अधिक संपत्ति के मामलों में सीबीआई जांच की मांग की थी. सत्ता में आने के बाद भी उसने सीबीआई जांच का संकल्प कई बार दोहराया था. लेकिन, शिबू सोरेन के साथ सरकार बनाते ही उसका इरादा बदल गया और वह इस विषय पर मौन हो गई. यह बड़े आश्चर्य की बात है. सत्ता के अंदर एवं बाहर धारणाएं और प्राथमिकताएं बदल जाएं तो हैरानी होगी ही. तीनों सरकारों के एक ही थैली के चट्टे-बट्टे होने का एक और उदाहरण हाल में सामने आया. बड़े अधिकारियों की सहकारी संस्था को ग्रेनाइट के भंडार से भरा भूखंड कौड़ी के मोल हस्तांतरित करने के मामले में तीन सरकारों का साझा एजेंडा दिखाई पड़ा. वर्ष 2000 में ग्रेनाइट उत्खनन के लिए सांगा बस्ती का 78.32 एकड़ का यह भूखंड झारखंड माइंस डेवलपमेंट कॉरपोरेशन को लीज़ पर दिया गया था. उत्खनन की तैयारी चल रही थी कि वर्ष 2004 में सिविल सर्विसेस ऑफिसर्स कोऑपरेटिव सोसाइटी का गठन हुआ. आईपीएस अधिकारी डी के पांडे उसके सचिव बने. और, इस भूखंड पर उनकी नज़र गड़ गई.

शिबू सोरेन

अर्जुन मुंडा

मधु कोड़ा

भाजपा जब सत्ता के बाहर थी तो उसने भ्रष्टाचार के विरुद्ध राजभवन का घेराव किया था और आय से अधिक संपत्ति के मामलों में सीबीआई जांच की मांग की थी.

अर्जुन मुंडा सरकार ने जेएमडीसी का लीज आवंटन रद्द कर अधिकारियों की सोसाइटी को यह भूखंड हस्तांतरित करने पर स्वीकृति की मुहर लगा दी. मधु कोड़ा की सरकार ने मांइस डेवलपमेंट कॉरपोरेशन को लीज़ पर यह भूखंड देने से साफ़ इंकार कर दिया. शिबू सरकार ने इसकी रजिस्ट्री की शुरुआत कर दी. एक लाख रुपये डिसमिल की ज़मीन मात्र 12 सौ रुपये डिसमिल की दर से दे दी गई. अब चाहे कोई कितना भी मासूम होने का ढोंग करे, तीनों सरकारें जानती थीं कि वे अफ़सरों को सौगात में क्या दे रही हैं. अफ़सर भी जानते थे कि उन्हें क्या दिया जा रहा है. यह बात अलग है कि मीडिया ने इसका भंडाफोड़ कर दिया और एक जागरूक समाजसेवी ने इस मामले में जनहित याचिका दायर कर निबंधन रद्द करने की मांग कर दी. हाईकोर्ट ने ज़मीन पर आंतरिक रोक लगा दी. सेल डीड के कार्यान्वयन को रोक दिया. इसकी मूल संचिका मांगी और किसी तरह के निर्माण पर रोक लगा दी. जानकारों के अनुसार, कुछ समय बाद ग्रेनाइट खदानों के नाम पर भूखंड का पुनः अधिग्रहण किया जाता और अधिकारियों को कई गुना मुआवज़ा देकर कृतार्थ किया जाता. सरकार किसी की होती, उन्हें मालामाल कर दिया जाता. लिहाज़ा इसे खनिज लूट की कोड़ा संस्कृति का ही एक नया अध्याय कहा जा सकता है.

इस तरह के कई मामले हैं, जो बताते हैं कि झारखंड में सत्ता की संस्कृति आर्थिक लूट और भ्रष्टाचार की संस्कृति का पर्याय बन चुकी है. इसलिए आय से अधिक संपत्ति के मामलों को धीरे-धीरे ठंडे बस्ते में डालने की कोशिश भी चल रही है. अगर मीडिया, जागरूक समाजसेवियों और न्यायपालिका का अंकुश न होता तो सत्ता में बैठे लोग इस सूबे को ही बेच डालते. बात कड़वी है. मगर, सच है.

नवल किशोर सिंह
feedback@chauthidunia.com

गन्ना किसान मिल मालिकों के चंगुल में

एक गन्ना मिल.

यह वही चंपारण है, जहां कभी गांधी जी ने भूमिहीन एवं ग़रीब किसानों को भय से मुक्ति और राहत दिलाने के लिए मशाल जलाई तथा उसे देश के कोने-कोने में ले गए थे. लेकिन अफ़सोस, निलहों के आतंक से तो किसानों को मुक्ति मिल गई, पर वे मिलहों के चंगुल में फंस गए. एक कहावत चंपारण में बहुत प्रसिद्ध है कि निलहा गए-मिलहा आए. जे पी आंदोलन के सिपाही लक्ष्मण गुप्ता की संकलित रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 1950 में लोहिया जांच आयोग के समक्ष चंपारण के क़रीब दस हज़ार लोगों के बयान क़लमबंद किए गए थे, जिनके आधार पर यह निष्कर्ष निकला था कि इन चीनी मिलों ने 30 रुपये से लेकर 200 रुपये प्रति एकड़ की क़ीमत पर भोले-भाले किसानों से ज़मीन हासिल की थी. आयोग ने इस बात का उल्लेख किया था कि हम इस बात को दावे के साथ कह सकते हैं कि चंपारण की चीनी भी उसी प्रकार लोगों के ख़ून से सनी है, जिस प्रकार आज से सौ वर्ष पूर्व नील चंपारणवासियों के रक्त से सना रहता था. उत्तर प्रदेश से अधिक गन्ना मूल्य दिलाने का आश्वासन देकर सत्ता में आई नीतीश सरकार भी राज्य समर्थित मूल्य तय करने में आनाकानी कर रही है. दूसरी ओर चीनी मिलों का 18 करोड़ रुपये का विक्रीकर माफ़ कर उन्हें संरक्षण दिया गया. फलस्वरूप मिलहे यानी मिल मालिक अधिक स्वछंद हुए और गन्ना काश्तकारों का शोषण पहले से अधिक बढ़ गया. केंद्र सरकार द्वारा गन्ना अध्यादेश 2009 लागू करने पर मचे घमासान के बाद पूर्व की तरह राज्य समर्थित मूल्य निर्धारित करने और काश्तकारों को उसका लाभ दिलाने पर बनी सहमति भी ठंडे बस्ते में डाल दी गई. लिहाज़ा चालू पेराई सत्र में भी बिहार शुगर मिल एसोसिएशन द्वारा निर्धारित मूल्य पर ही काश्तकार गन्ना बेचने को विवश हैं. हद तो यह है कि काश्तकारों के लिए लाभकारी गुड़ उद्योग को राज्य सरकार ने पटना उच्च न्यायालय के एक आदेश का हवाला देते हुए बंद करा दिया.

ज़ाहिर है कि नीतीश सरकार को काश्तकारों की नहीं, बल्कि मिलों की चिंता अधिक सता रही है. पिछले पेराई सत्र में मिलों द्वारा गन्ना मूल्य में की गई भारी कमी की वजह से उत्पादन बुरी तरह प्रभावित हुआ. लिहाज़ा चालू पेराई सत्र में गन्ने की अनापूर्ति की समस्या से निजात पाने के लिए मिलों द्वारा धीरे-धीरे मूल्य बढ़ाया जा रहा है. 190 रुपये प्रति क्विंटल से शुरू हुई ख़रीद 220 से 230 रुपये प्रति क्विंटल तक पहुंच गई है. जबकि उत्तर प्रदेश में 280 रुपये प्रति क्विंटल की दर से भुगतान हो रहा है. मिलहों द्वारा काश्तकारों के शोषण की गूंज के बावजूद सरकार मौन है. वर्ष 2004 में सर्वोच्च न्यायालय ने देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा गन्ना मूल्य निर्धारण में राज्य सरकारों का हस्तक्षेप समाप्त करने वाले आदेश को रद्द कर दिया था. फिर भी बिहार सरकार के गन्ना आयुक्त प्रायः हर पेराई सत्र में गन्ना मूल्य निर्धारण में राज्य समर्थित मूल्य के बारे में पटना उच्च न्यायालय के 1996-97 के आदेश का हवाला देकर पल्ला झाड़ लेते हैं.

किसान नेता नेसर अहमद ने पटना उच्च न्यायालय में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का हवाला देते हुए एक याचिका दायर की है, लेकिन उसका निपटारा नहीं हो पाया है. याचिका दाख़िल होने के बाद राज्य सरकार ने सभी प्रभेदों के गन्नों का समान मूल्य दिए जाने की नीति समाप्त कर आगात, सामान्य एवं ख़ारिज़ प्रभेदों के लिए अलग-अलग मूल्य निर्धारित कराया. लेकिन, मिलों ने इसमें भी घोटाला कर दिया. गन्ना विकास विभाग द्वारा निर्धारित आगात प्रभेदों को सामान्य बना दिया गया. चंपारण में तो मिलों ने और गड़बड़ी कर दी है. स्व-निर्धारित आगात एवं सामान्य प्रभेदों की तौल रसीदों पर ख़ारिज़ की मुहर लगा कर करोड़ों रुपये गन्ना मूल्य की लूट कर ली गई. मसलन गन्ना रोप वर्ष 2006-07 में चंपारण में 18 प्रतिशत ख़ारिज़ प्रभेदों के गन्ने का उत्पादन हुआ. यह गन्ना विकास विभाग के सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है, लेकिन मिलों ने 45 से 48 प्रतिशत ख़ारिज़ प्रभेदों के गन्ने की पेराई की है. हद तो यह है कि माधोपुर कृषि अनुसंधान केंद्र के गन्ने की तौल रसीद पर नरकटियागंज चीनी मिल ने ख़ारिज़ प्रभेद अंकित किया. ज़ाहिर है कि मिलों ने 30 प्रतिशत सामान्य या आगात प्रभेदों के गन्नों को ख़ारिज़ बताकर जमकर लूट की. वजन की कटौती, रिकवरी की चोरी, गन्ना चालान की हेराफेरी, गन्ना नियंत्रण आदेश 1966 के प्रावधान क्लॉज 5(ए) के तहत मूल्य की चोरी बदस्तूर जारी है. पिछले पेराई सत्रों में तौल रसीदों पर साफ़ तौर पर अंकित किया गया कि क्लॉज 5(ए) के तहत पेश मूल्य का भुगतान किया जाएगा, लेकिन बिहार की मिलों द्वारा क्लॉज 5 (ए) के तहत भुगतान नहीं किया गया. उदाहरण के तौर पर पिछले पेराई सत्र में उत्तर प्रदेश ने क्लॉज 5 (ए) का लाभ देते हुए 185 रुपये प्रति क्विंटल गन्ना मूल्य का भुगतान किया. जबकि बिहार में यह मूल्य 108 से 125 रुपये प्रति क्विंटल के बीच ही झूलता रहा. इस हिसाब से पिछले पेराई सत्र का कम से कम 60 रुपये प्रति क्विंटल की दर से अतिरिक्त भुगतान किसानों को होना चाहिए.

मिलों द्वारा बाहरी क्रय केंद्रों और मिलों में आपूर्ति किए गए गन्ने के मूल्य में भारी अंतर किया जाता है. जबकि यह अंतर अधिक दूरी होने पर मामूली होता है. इसके अलावा प्रभेदवार मूल्य निर्धारण में भी व्यापक अंतर कर काश्तकारों को चूना लगाया जाता है. गन्ना विकास के लिए प्रत्येक वर्ष मिलों को केंद्र एवं राज्य सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं के तहत करोड़ों रुपये का अनुदान मिलता है. सूत्रों के अनुसार, अनुदान की लगभग 80 फ़ीसदी रक़म मिलों द्वारा हड़प ली जाती है. किसानों के दबाव में कुछ सामग्री मसलन वर्मी कंपोस्ट, कृषि यंत्र और उर्वरक आदि का वितरण कर दिया जाता है. इसका मूल्य बाज़ार के खुदरा भाव से अधिक होता है. इसकी प्रकृति अमानक एवं घटिया किस्म की होती है. फिलहाल मिल प्रबंधन एवं अधिकारियों की साठगांठ के कारण गन्ना काश्तकार घुन की तरह पिस रहे हैं. बेतिया के ईख पदाधिकारी अविनाश चंद्र कहते हैं कि राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर जारी आदेशों का पालन हमेशा कराया जाता है और संबंधित विभाग के अधिकारी भी मिल प्रबंधन को समय-समय पर आदेश देते रहते हैं. नरकटियागंज मिल के अधिकारी आशीष खन्ना का कहना है कि बिहार में मिल प्रबंधन को काफी दयनीय हालत से गुजरना पड़ता है. इसके बावजूद किसानों को उचित गन्ना मूल्य का भुगतान मिल की ओर से नहीं किया जाता है.

गन्ने से लदी बैलगाड़ियां.

मीना कुमारी
feedback@chauthidunia.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 15 फरवरी–21 फरवरी 2010

सम्राट अशोक के समय में केसपट्टा के नाम से मशहूर रहा यह केसरिया बौद्ध स्तूप ख़ुद में कई रहस्य समेटे हुए है. मान्यता यह है कि भगवान बुद्ध ने अपने निर्वाण से पहले यहां रात बिताई थी और अपना कटोरा लिच्छवियों को सौंपा था.

यह कैसा सुशासन?

अनंत विजय

गया रह फ़ीसदी से ज़्यादा की विकास दर हासिल कर बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार फूले नहीं समा रहे हैं. राज्य की अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए तमाम पुरस्कार पाकर वह इतरा रहे हैं. देश भर में इस बात को लेकर उनकी ज़बरदस्त प्रशंसा हो रही है कि बिहार को पटरी पर लाकर उन्होंने ऐतिहासिक काम किया है. कभी क्रूज पर तो कभी गांवों में जाकर मंत्रिमंडल की बैठक करके नीतीश ने ख़ासी प्रशंसा बटोरी. लालू यादव के राष्ट्रीय जनता दल के लगभग बीस वर्षों के शासनकाल में सूबे की दुर्दशा से परेशान बिहार की जनता को नीतीश कुमार ने सुशासन का सपना दिखाया. और, जंगलराज से आजिज जनता ने उन्हें मौक़ा भी दिया. लालू के जंगलराज से प्रदेश को मुक्ति दिलाने का दंभपूर्ण दावा कितना खोखला है, इसकी पोल एक लोमहर्षक घटना से खुल गई.

भागलपुर के पास एक गांव में एक विधवा के साथ हुए सामूहिक बलात्कार ने नीतीश सरकार के कई दावों की धज्जियां उड़ा दीं. अपराधियों ने न केवल महिला के साथ सामूहिक बलात्कार किया, बल्कि उसके जननांग में पत्थर ठूंसने जैसा बर्बरतापूर्ण कृत्य भी किया. यह तो अपराध की एक सामान्य कहानी हो सकती है और नीतीश समर्थक इसे बर्बर अपराध कहकर अपना पल्ला झाड़ सकते हैं. वे यह तर्क भी दे सकते हैं कि सामूहिक बलात्कार की घटनाएं तो कहीं भी हो सकती हैं. लेकिन, सामूहिक बलात्कार के बाद उस महिला के साथ जो घटा, वह एक सभ्य सरकार के मुंह पर तमाचा है. हुआ यह कि बलात्कार के बाद उस महिला को उसके घरवाले भागलपुर के जवाहर लाल नेहरू मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल ले गए, जहां बजाय उसे उचित इलाज मुहैया कराने के अस्पताल प्रशासन ने वारदात के इलाक़े के पुलिस थाने से इंज्यूरी पर्ची लाने का फ़रमान सुना दिया. सामूहिक बलात्कार की शिकार महिला जिसके जननांग में पत्थर डले हों, उसकी पीड़ा की परवाह किए बग़ैर अस्पताल प्रशासन का यह व्यवहार नीतीश सरकार के स्वास्थ्य महकमे में व्याप्त अराजकता और संवेदनहीनता को उजागर करता है. भयानक दर्द से कराहती महिला भागलपुर से लगभग बीस किलोमीटर दूर बरारी थाने जाकर इंज्यूरी की पर्ची भी ले आती है, लेकिन इसके बावजूद उसकी मुसीबतों का अंत यहां भी नहीं हुआ. इंज्यूरी पर्ची लाने के बाद मेडिकल कॉलेज की नर्सों ने महिला के जननांग से पत्थर तो निकाल दिए, लेकिन उसे वहां भर्ती और इलाज करने से इंकार कर दिया. उसे यह समझाकर वापस भेज दिया गया कि मामला चूंकि बलात्कार का है, इसलिए इलाज सरकारी सदर अस्पताल में होगा. लिहाज़ा दर्द से तड़पती और भयानक मानसिक यंत्रणा झेल रही उस महिला को लेकर उसके परिवारीजन रात दस बजे सदर अस्पताल पहुंचे. लेकिन, उनके दु:खों का वहां भी अंत नहीं हुआ, क्योंकि उस वक़्त तक अस्पताल बंद हो चुका था. बिहार में पब्लिक हेल्थ सेक्टर की हालत बयां करते इस अस्पताल के अहाते में हाड़ कंपा देने वाली ठंड में दर्द से कराहती उस महिला को पूरी रात जैसे-तैसे गुज़ारनी पड़ी. अपने लिए बेहतर सुबह का इंतज़ार करने वाली उस महिला और परिवारीजनों को सरकारी अस्पताल ने दर्द की दवा देकर बग़ैर किसी रेफर पेपर के दोबारा मेडिकल कॉलेज भेज दिया. इस बीच महिला की हालत लगातार बद से बदतर होती जा रही थी. सरकारी अस्पतालों की संवेदनहीनता की शिकार उस महिला को सब्ज़ी बेचने वाले ठेले पर लादकर उसके रिश्तेदार एक बार फिर से मेडिकल कॉलेज पहुंचे. वहां पहुंच कर पता चला कि कोई रोग विशेषज्ञ मौजूद नहीं है. दिन के बारह बजे तक मेडिकल कॉलेज और अस्पताल में किसी महिला डॉक्टर का न होना स्वास्थ्य महकमे के कामकाज के तरीक़े पर एक बड़ा सवाल खड़ा करता है. कई घंटों के बाद किसी तरह महिला डॉक्टर को बुलाया जा सका और फिर उस पीड़ित महिला का इलाज संभव हो सका.

इस एक घटना ने बिहार में नीतीश कुमार के सुशासन के तमाम दावों की हवा निकाल दी. पहले सरेआम एक विधवा के साथ सामूहिक बलात्कार और फिर नामजद अपराधियों की गिरफ़्तारी न हो पाने से क़ानून व्यवस्था की हालत का अंदाज़ा आप सहज ही लगा सकते हैं. बलात्कार की शिकार महिला को लगभग अड़तालिस घंटे तक एक अस्पताल से दूसरे अस्पताल के बीच चक्कर काटने के बाद भी उचित इलाज न मिल पाना हेल्थ सेक्टर की हक़ीक़त बयां कर रहा है. डॉक्टरों की ग़ैर मौजूदगी और अस्पतालों की संवेदनहीनता प्रशासन की कमज़ोर पकड़ को भी उजागर करता है. क़ानून व्यवस्था और स्वास्थ्य दोनों जनता से बेहद क़रीब से जुड़े हुए हैं. इन दो महकमों की हालत आप देख ही चुके हैं.

नीतीश कुमार बिहार में विकास के कामों का चाहे जितना भी ढिंढोरा पीटें, लेकिन राजधानी पटना से सिर्फ़ सवा सौ किलोमीटर की दूरी पर सदायबीघा एक ऐसा गांव है, जहां पहुंचने के लिए आज तक कोई सड़क नहीं है. वहां आपको नाव या फिर खेतों के बीच बने कच्चे मार्ग से पहुंचना पड़ेगा. यह जानकर आश्चर्य होगा कि आज़ादी मिलने के 62 सालों बाद भी पटना से सटे इस ज़िले में बिजली तक नहीं है. इस साल होने वाले विधानसभा चुनावों में नीतीश कुमार के दावों को जनता अपनी कसौटी पर ज़रूर परखेगी. इतिहास गवाह है कि बिहार की जनता को ज़्यादा समय तक छला नहीं जा सकता है.

(लेखक आईबीएन 7 से जुड़े हैं)

feedback@chauthiduniya.com

केसरिया बौद्ध स्तूप पर ख़तरा!

ऐतिहासिक धरोहरों में शुमार चंपारण स्थित केसरिया आज अपने हाल पर रो रहा है. यहां विश्व का सबसे ऊंचा बौद्ध स्तूप है. अफ़सोस, सैलानी इसकी दुर्दशा देखकर मायूस हो जाते हैं. और, इतिहास की पहचान की उपेक्षा का दर्द लेकर लौट जाते हैं. अगर यही स्तूप किसी और देश में होता तो यह अब तक पर्यटन स्थल के रूप में तब्दील हो जाता, लेकिन यहां जिन पर इसकी जिम्मेदारी है, वे गहरी नींद सो रहे हैं. यह लापरवाही नहीं तो और क्या है?

मनोज कुमार राव

दुनिया भर के पर्यटक विश्व के सबसे ऊंचे बौद्ध स्तूप का दीदार करने पूर्वी चंपारण स्थित केसरिया ज़रूर आते हैं, लेकिन उसकी दुर्दशा देखकर उन्हें यकीन ही नहीं होता है कि किसी ऐतिहासिक धरोहर के साथ ऐसी ला-परवाही भी हो सकती है. इतना ही नहीं, जब सैलानी सिर कटी बुद्ध की मूर्ति और स्तूप की दीवारों में उभरी दरारें देखते हैं तो वे अवाक रह जाते हैं.

सम्राट अशोक के समय में केसपट्टा के नाम से मशहूर रहा यह केसरिया बौद्ध स्तूप ख़ुद में कई रहस्य समेटे हुए है. मान्यता यह है कि भगवान बुद्ध ने अपने निर्वाण से पहले यहां रात बिताई थी और अपना कटोरा लिच्छवियों को सौंपा था. उन्हीं की याद में इस स्तूप का निर्माण कराया गया था. 1934 के भूकंप में यह स्तूप अपनी वास्तविक ऊंचाई से थोड़ा कम हो गया, लेकिन आज भी इसकी ऊंचाई इंडोनेशिया के जावा स्थित बोरोबोदुर बौद्ध स्तूप से लगभग एक फुट अधिक है. लगभग 200 ईस्वी से 750 ईस्वी के बीच के इस स्तूप को विश्व के अनेक प्रसिद्ध लोगों ने अपनी उंगलियों से स्पर्श किया, लेकिन आज तक इसकी हालत सुधारने की किसी ने जहमत नहीं उठाई. सुधार कार्यों के नाम पर प्रशासनिक अधिकारी सिर्फ़ अपने से बड़े अधिकारियों को रिपोर्ट ही भेजते रहे.

वर्ष 1814 में ब्रिटिश आर्किलॉजिस्ट कर्नल मैकेंजी, 1835 में आर्किलॉजिस्ट हडसन और 1861-62 में कनिंघम ने इस स्तूप की खुदाई में रुचि दिखाई. मगर, नतीजा सिफर ही रहा. पटना स्थित आर्किलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के कार्यालय से जुड़े चीफ सुपरिटेंडेंट आर्किलॉजिस्ट मोहम्मद केके ने 1996 से लेकर 2000 तक इस स्तूप की खुदाई की ज़िम्मेदारी ली, लेकिन किसी कारणवश खुदाई का यह काम महज़ 30 फीसदी हो सका.

आज इसे देखने वाला कोई नहीं है. कभी लालू प्रसाद यादव तो कभी नीतीश कुमार ने यहां अपनी विशाल जनसभाएं आयोजित करके केसरिया को बौद्ध सर्किट से जोड़ने और अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराने के वादे किए, लेकिन मामला कहां जाकर अटक गया, यह आज तक पता नहीं चला. ज़िला प्रशासन ने कई बार इस जगह का मुआयना कराया और काम आगे बढ़ाने का आश्वासन दिया, लेकिन फिर भी हालत जस की तस रही. इस ऐतिहासिक स्तूप के प्रांगण में चरवाहे पशु चराते हैं. रखरखाव के अभाव में स्तूप की दीवारों पर जगह-जगह दरारें आ गई हैं. परिसर के अंदर बैठी हुई मुद्रा में भगवान बुद्ध की कई प्रतिमाएं थीं, जो आज सिर कटी अवस्था में हैं. उन्हें देखकर पर्यटक अफ़सोस जाहिर करते हैं. इस ऐतिहासिक धरोहर की देखरेख के लिए यहां एक प्रशासनिक कार्यालय भी है, लेकिन इसकी भूमिका शायद औपचारिक उपस्थिति भर के लिए है. पर्यटक यहां से निराश होकर और नकारात्मक टिप्पणी करके ही लौटते हैं. स्थानीय स्तर पर भी कई बार इस विश्व धरोहर की सुरक्षा के लिए कमेटी का गठन किया गया, लेकिन कोई बहुत बड़ी उपलब्धि सामने नहीं आई. क्षेत्र की प्रमुख सुमित्रा यादव ने कहा कि इस ऐतिहासिक स्तूप की सुरक्षा प्रशासन को हर हाल में करनी चाहिए. इसके लिए सुधार कार्य अपेक्षित तेजी से नहीं हो रहे हैं, बल्कि बयानबाजी और रिपोर्ट भेजने का काम ही प्रमुखता के साथ होता है. ज़िलाधिकारी नर्मदेश्वर लाल ने आश्वासन दिया है कि शीघ्र ही इस ऐतिहासिक धरोहर की कायापलट होगी. प्रशासन जब कुछ करेगा, तब करेगा, लेकिन जनसामान्य को भी इस दिशा में प्रयास करने होंगे, ताकि स्तूप की हालत और न बिगड़ने पाए.

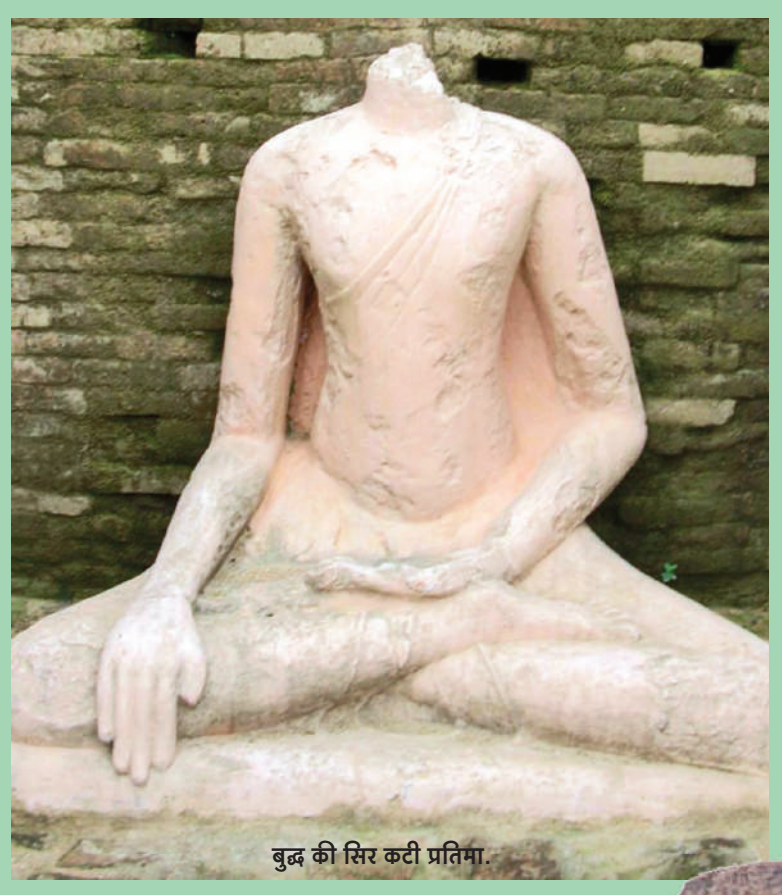

बुद्ध की सिर कटी प्रतिमा.

feedback@chauthiduniya.com

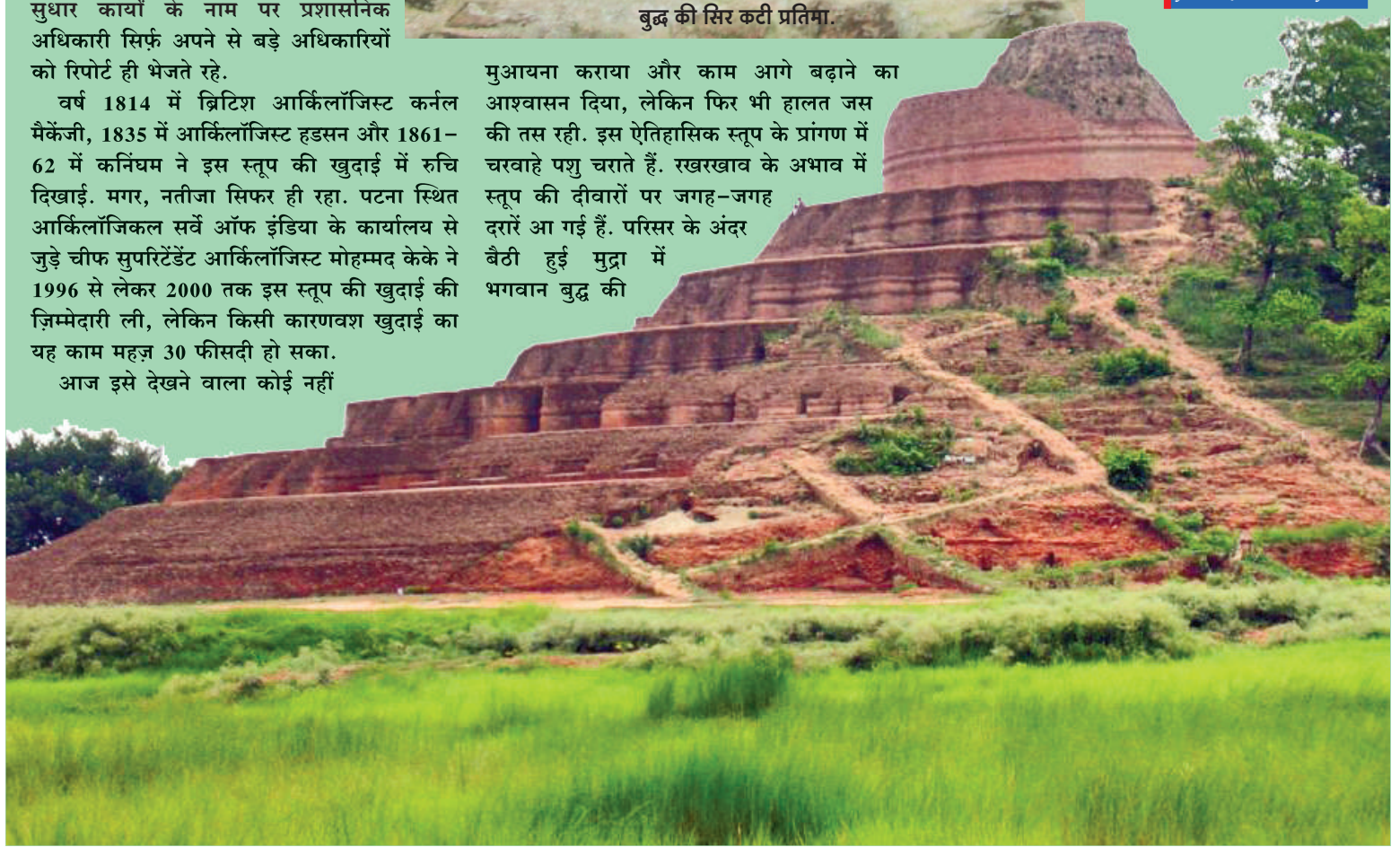

बुरा दौर बीत गया : अनारा

अनारा गुप्ता को भूलना मुमकिन नहीं है. मिस जम्मू बनने से लेकर सेक्स सीडी स्कैंडल तक ऐसे कई वाकए हैं, जिन्हें लेकर वह हमेशा सुर्खियों में रहीं. सीडी कांड ने उन्हें गहरा सदमा पहुंचाया, जिससे उबरने में काफी लंबा समय लग गया. लेकिन, अब अनारा खुश हैं. खुश होने का यह मौक़ा उन्हें भोजपुरी सिनेमा ने दिया है. अनारा इससे पहले हिंदी फिल्म *मिस अनारा* से अभिनय की पारी शुरू की थीं, लेकिन उस फिल्म से वह मुकाम हासिल नहीं हुआ, जिसकी अनारा हक़दार थीं. हालांकि योगेश भारद्वाज द्वारा निर्देशित यह फिल्म उनके सीडी प्रकरण पर आधारित थी, लेकिन अब दु:ख की बदली छंट चुकी है और अनारा भोजपुरी सिनेमा में रम चुकी हैं. सुपरहिट फिल्म *विधाता* से शुरू हुआ अनारा का भोजपुरिया सफर जबरदस्त गति से आगे बढ़ रहा है. लगभग सभी बड़े कलाकारों एवं निर्माताओं के साथ काम कर चुकीं अनारा का नाम बोल्ड और ब्यूटीफुल अभिनेत्रियों में शुमार होता है. इस दौरान उनकी कई फिल्में रिलीज हुई हैं, जिनमें ज़्यादातर सुपर-डुपर हिट रही हैं. चाहे वह *रंग दे बसंती चोला* हो या *जय हो दूल्हे राजा*. इसके अलावा मुकेश पांडे के साथ दुल्हनिया जाएगी दूल्हे राजा के साथ, बॉबी सिंह की नटवरलाल एवं बाली की फिल्म नथुनिया पे गोली मारे में भी उनकी अदाओं और अभिनय का भरपूर जलवा दिखाई दिया. इतना ही नहीं, फिल्म *वाह खिलाड़ी वाह* में उनके आइटम नंबर की भी काफी चर्चा हुई. अनारा कहती हैं कि भोजपुरी फिल्मों से उन्हें विशेष लगाव है. यही वह जगह है, जहां उन्हें प्यार और सहारा मिला.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com